ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 03 जून 2018 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 03 जून 2018 से 09 जून 2018

जयेष्ठ कृ. – 05 ● वि० सं०–2075 ● वर्ष 60, अंक 22, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 195 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,119 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

मुरलीधर डी.ए.वी. स्कूल का स्थापना दिवस धूमधाम से मनाया गया

मुरलीधर डीएवी सीनियर सेकेंडरी पब्लिक स्कूल का 37वां स्थापना दिवस तथा महात्मा हंसराज जी का जन्मदिवस हर्षोल्लास से मनाया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि डॉ. रवि बंसल (मेंबर ऑफ रोटरी क्लब तथा आश्विन बंसल (उद्योगपति) ने शिरकत की।

कार्यक्रम का शुभारम्भ हवन से किया गया। जिसमे प्राचार्य, मुख्य अतिथि, अध्यापकगण तथा विद्यार्थियों ने हिस्सा लिया। इसके बाद गायत्री मन्त्र तथा डीएवी गान किया गया। स्कूल प्राचार्य ने अपने भाषण में सर्वप्रथम मुख्य अतिथियों का स्वागत किया तथा स्कूल के जन्मदिवस पर सभी स्टाफ सदस्यों तथा विद्यार्थियों को बधाई दी। उन्होंने कहा कि अध्यापकगण तथा सभी स्टॉफ सदस्यों के अथक प्रयास से यह स्कूल उन्नति के शिखर पर है। आज इस स्कूल में विद्यार्थियों कि संख्या 3100 से भी अधिक हो गई है। उन्होंने बताया कि मुरलीधर डीएवी सीनियर सेकेंडरी पब्लिक स्कूल आधुनिकीकरण के साथ साथ नैतिक मूल्यों को भी प्राथमिकता देता रहा है।

आर्यसमाज कार्यकर्ता श्वेता शर्मा द्वारा 'हे प्रभु आनन्ददाता' भजन कि सुंदर प्रस्तुति दी गई। विद्यार्थियों ने समूह गान तथा समूह नृत्य से समां बांध दिया। मुख्य अतिथि ने विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय, तृतीय आये बच्चों को पुरस्कृत किया।

मुख्य अतिथि ने अपने भाषण में सभी को मुरलीधर डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना दिवस पर बधाई दी। उन्होंने कहा कि बच्चे दुनिया बदल सकते हैं। उन्होंने कैंसर के बारे में भी बच्चों को जागरूक किया। अंत में मुख्य अतिथि ने सभी विद्यार्थियों को हमेशा उन्नति के पथ पर अग्रसर होने का आशीर्वाद दिया। कार्यक्रम का समापन राष्ट्रीय गान द्वारा हुआ।

हिन्दी पुत्री पाठशाला खन्ना में हुआ वैदिक भजन गायन

हिन्दी पुत्री पाठशाला सी.सै. खन्ना में आर्य समाज जी.टी.रोड़, आर्य समाज हिन्दी पुत्री पाठशाला, खन्ना भजन–गायन समारोह आयोजित किया गया। जिसमें डी.ए.वी. पब्लिक सी: सै: स्कूल, वेद मन्दिर मॉडल हाई स्कूल, खन्ना के अध्यापक/अध्यापिकाओं, छात्र/छात्राओं, आर्य समाज खन्ना के सदस्यों तथा शहर के गणमान्य व्यक्तियों ने बड़ी श्रद्धा और उत्साह से भाग लिया।

इस अवसर पर मुख्यातिथि श्री जितेन्द्र देवगन (उद्योगपति) रहे। आर्य समाज तथा स्थानीय डी.ए.वी. संस्थाओं के सदस्यों ने मुख्यातिथि का स्वागत किया। कार्यक्रम का शुभारम्भ यज्ञ के पवित्र मन्त्रों से हुआ। मुख्यातिथि द्वारा ज्योति प्रज्ज्वलित की गई।

प्रधाना श्रीमती सरोज कुन्दरा ने मुख्यातिथि जी के व्यक्तित्व का परिचय देते हुए कहा कि श्री जितेन्द्र देवगन एक कर्मयोगी, धार्मिक, अनुशासनबद्ध और व्यापक दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्ति है। शिक्षा से इन्हें विशेष लगाव है। उन्होंने कहा कि दान और परमार्थ में इस परिवार का मुकाबला नहीं है। पश्चात् सुर सम्राट भजनोपदेशक स. सुरेन्द्र गुलशन (जालंधर वाले) तथा संदीप आर्य गिल (मेरठ वाले) ने अपने भजनों के माध्यम से कई आध्यात्मिक गुत्थियाँ खोली तथा भजनों और प्रवचनों द्वारा बच्चों को परिश्रम, नैतिकता, राष्ट्रीयता, अन्तर्राष्ट्रीयता, शिक्षा के महत्व को बताया।

इस अवसर पर आर्य समाज की प्रधाना श्रीमती सरोज कुन्दरा सहित अनेकों सदस्य उपस्थित रहे। मुख्यातिथि श्री जितेन्द्र देवगन विद्यार्थियों को जीवन लक्ष्य निर्धारित करने, मेहनत करने, माता–पिता का आदर करने तथा अपनी संस्कृति से जुड़े रहने के लिए प्रेरित किया। अन्त में श्री सोमदेव आर्य ने आए हुए मेहमानों का धन्यवाद किया। शान्ति पाठ के पश्चात् उपस्थित जनों को ऋषि लंगर वितरित किया गया।

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल सैक्टर 15 ए, चण्डीगढ़ में सामूहिक यज्ञ

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल सैक्टर 15 ए, चण्डीगढ़ में प्राचार्य श्रीमती अनुजा शर्मा के दिशा–निर्देश में विद्यालय में स्थापित आर्य युवा समाज के तत्त्वावधान में "सामूहिक मासिक जन्मदिवसीय यज्ञ" का आयोजन किया गया, जिसमें अप्रैल 2018 में जिन–जिन अध्यापकजनों व विद्यार्थियों का जन्मदिन होते हैं, लगभग सभी ने सम्मिलित होकर सामूहिक रूप से जन्मदिन मनाया। इस सामूहिक यज्ञ के मुख्य अतिथि प्राचार्या श्रीमती अनुजा शर्मा थीं। विद्यालय के धर्माचार्य, आचार्या रमेश शास्त्री ने यज्ञ के ब्रह्मत्व कार्य को बहुत ही विधिवत् किया तथा विशेष जन्मदिवसीय मंत्रों का उच्चारण करते हुए सभी से आहुतियाँ डलवायीं। इसके साथ–साथ सभी याज्ञिक अध्यापकवर्ग व विद्यार्थियों के लिए उनके सुदीर्घ जीवन, सुन्दर स्वास्थ्य व यशस्वी जीवन की कामना की।

यज्ञोपरांत, प्राचार्या जी ने उपस्थित सभी जनों के ऊपर जलवृष्टि करते हुए अपनी शुभकामनाएँ व आशीर्वाद प्रदान किया। इस उत्तम परम्परा का सभी ने हृदय से स्वागत किया एवं प्राचार्या जी का आभार व्यक्त किया। अन्त में, शान्ति पाठ पुनश्च प्रसाद–वितरण किया गया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 03 जून 2018 से 09 जून 2018

दोनों हाथों से भर-भरकर दे

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

दिवो विष्ण उत वा पृथिव्याः, महो विष्ण उरोरन्तरिक्षात्।
हस्तौ पृणस्व बहुभिर्वसव्यैः, आप्रयच्छ दाक्षिणादोत सव्यात्।।

अथर्व 7.26.8

ऋषिः **मेधातिथिः**। देवता **विष्णुः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● **(विष्णो)** हे सव्रव्यापक परमात्मन्! **(दिव)** द्युलोक से **(उत वा)** और **(पृथिव्याः)** पृथिवी–लोक से [तथा] **(विष्णो)** हे विश्वान्तय्रमिन्! यज्ञ के देव! **(महः)** महनीय **(उरोः)** विस्तीर्ण **(अन्तरिक्षात्)** अन्तरिक्ष–लोक से **(बहुभिः)**वहुत– से **(वसव्यैः)** ऐश्वर्य–समूहों से **(हस्तौ)** दोनों को **(पृणस्व)** भर ले। **(दक्षिणात्)** दाहिने हाथ से **(आ प्रयच्छ)** दान दे **(उत)** और **(सव्यात्)** बाएँ से [भी] (आ [प्रयच्छ]) दान दे।

● हे विष्णु! हे सर्वव्यापक! हे विश्वान्तर्यामिन्! हे विश्व–ब्रह्माण्ड के स्वामिन! तुम अपूर्व धनाधीश हो। विश्व के द्युलोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक में जो धन बिखरा पड़ा है, वह सब तुम्हारा ही है। अतः तुम धन–कुबेर हो। एक और तुम धनपति हो ओर हम अकिंचन हैं। अतः हम चाहते हैं कि तुम अपने कोष में से दाहिने–बाएँ दोनों हाथों से भर–भरकर हमें दान दो। तुम्हारे रचे द्यु–लोक में प्रकाश का अनुपम पारावार भरा पड़ा है। वह प्रकाश तुम हमें भी प्रदान करो। तुम्हारे रचे विशाल अन्तरिक्ष–लोक में वायु और पर्जन्य का सागर उमड़ रहा है। उसमें से हमें भी प्राण–वायु और अमृतमय वृष्टि–जल प्रदान करो। तुम्हारे रचे पृथ्वी–लोक से सुवण, रजत, ताम्र अयस, हीरे, मोती आदि ऐश्वर्यों की निधियाँ भरी हुई हैं। वे ऐश्वर्य तुम हमें भी प्रदान करो। अल्प मात्रा में नहीं, प्रचुर मात्रा में प्रदान करो, क्योंकि हम ऐश्वर्यमय जीवन जीने की ही साध लिये हुए हैं।

पर हे विश्वव्यापी देव! हम केवल इन भौतिक ऐश्वर्यों का ही पाकर सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहते। हम शरीरस्थ द्यु–लोक, अन्तरिक्ष–लोक और पृथिवी–लोक के ऐश्वर्यों को भी पाने के लिए आतुर हो रहे हैं। हमारा अन्नमय कोश ही पृथिवी–लोक है, जिसमें शरीर की त्वचा से लेकर अस्थि–पर्यन्त सब ढांचा आ जाती है। असका ऐश्वर्य है शारीरिक स्वास्थ्य और शारीरिक बल, जिसके बिना मनुष्य का जीवन–यापन,व्यान,उदान, समा, इन पांचों से तथा कर्मेन्द्रियों से मिलकर प्राणमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है प्रागण, अपानन आदि क्रियाओं का समुचित रूप से होते रहना तथा हस्त–पादादि कर्मेन्द्रियों को कार्य–क्षम बने रहना। मन और ज्ञानेन्द्रियों से मिलकर मनोमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है मन के माध्यम से ज्ञानेन्द्रियों का ज्ञान–प्राप्ति में सहायता होना तथा मन का सत्यसंकल्प करना। ज्ञानेन्द्रियों–सहित बुद्धि विज्ञानमयकोश कहलाता है। इसका ऐश्वर्य है ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान पर ऊहापोह करके निश्चयात्मक ज्ञान अर्जित करना। आनन्दमय कोश द्यु–लोक है, जहाँ हृदयपुरी में प्रतिष्ठित आत्मा के अन्दर ब्रह्म का वास है। इसका ऐश्वर्य है ब्रह्मानन्द की प्राप्ति। हे विष्णुदेव! तुम इन समस्त ऐश्वर्यों से भी भरपूर करने की कृपा करते रहो।

हे जगत्पिता! तुम निरैश्वर्य की अवस्था से पार करके हमें अधिकाधिक ऐश्वर्य प्रदान कर कृतार्थ करते रहो।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

बोध कथाएँ

● महात्मा आनन्द स्वामी

स्वामी जी ने **'भगवान की सच्ची प्रार्थना'** पर कथा सुनाते हुए कहा ईश्वर तुम्हारे हृदय की आवाज को सुनता है। उसे शब्दों की आवश्कता नहीं। भगवान हृदय के प्यार को देखता है। आपके हृदय में उसके लिए प्यार है तो वह मिलेगा अवश्य। **'प्रभु–भजन में तन्मयता'** के संदर्भ में कहा प्रभु भजन वह है, जिसमें मनुष्य को किसी तरह की सुध बुध नहीं रहती, वह प्रभु भक्ति में मग्न रहता है, उसे यह भी पता नहीं चलता कि उसके समक्ष क्या हो रहा है? **'माँगना है जो कुछ खुदा से माँग'** पर कथा सुनाते हुए कहा कि मनुष्य को यदि कुछ माँगना है तो इंसान से नहीं, परमात्मा से माँगो ।

–आगे पढ़ेंगे तीन लघु कथाएँ

भगवान् की सच्ची प्रार्थना

रूस के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री तॉल्स्तॉय ने एक कहानी लिखी है। एक थे पादरी महोदय, बहुत बड़े धर्म–प्रचारक। स्थान–स्थान पर जाकर लोगों को ईसा महोदय का उपदेश देते। वह प्रार्थना सिखाते, जो बाइबिल में लिखी है। लोगों को कहते–"यह प्रार्थना करो, तभी तुम्हारा कल्याण होगा।" देशों से बाहर दूसरे देशों में भी वे जहाज़ में बैठकर गए। जहाज़ चल रहा था। उन्होंने सागर में एक छोटा–सा द्वीप देखा। सोचा–'शायद वहाँ भी कोई व्यक्ति हो। चलो, उसके पास चलें। उसे ईश्वर–प्रार्थना करने का मार्ग बताएँ।' द्वीप में उतर गए अपने साथियों समेत। इधर–उधर देखा, परन्तु कोई दिखाई नही दिया।

तभी द्वीप के दूसरी ओर से तीन बूढ़े आते दिखाई दिए। पादरी महोदय रुक गए। बूढ़े निकट आए तो पादरी ने देखा–उनकी दाढ़ियाँ सफ़ेद हैं, सिर के बाल भी सफ़ेद हैं। वृक्षों की छाल से उन्होंने अपने शरीर ढाँप रखे हैं। कोई भी वस्तु उनके पास नहीं। पादरी ने पूछा–"यहाँ कोई ग्राम अथवा नगर नहीं हैं?"

एक वृद्ध ने कहा–"नहीं, इस द्वीप में हम तीनों रहते हैं। चौथा कोई नहीं। फल हैं, वे खा लेते हैं। पानी है, वह पी लेते हैं। कभी कोई भूला–भटका इधर आ जाए तो उसे भी फल और पानी दे देते हैं।"

पादरी ने कहा–"यही करते हो? अरे अभागो! उस ईश्वर को याद करो, जिसने तुम्हें उत्पन्न किया है।"

दूसरे ने कहा–"उसे ते हम स्मरण करते ही हैं। उसे स्मरण करने के अतिरिक्त और कोई काम हमें है नहीं।"

पादरी ने पूछा–"किस प्रकार स्मरण करते हो?"

तीसरे ने कहा–"हम तीनों बैठ जाते हैं। ऊपर देखते हैं। हाथ उठाकर कहते हैं–हम तीन हैं। तुम भी तीन हो। हमारी रक्षा करो!"

पादरी ने कहा–"यह क्या मूर्खों की–सी प्रार्थना है? तुम लोग बूढ़े हो गए हो। सारा जीवन तुमने नष्ट कर दिया। बैठो, मैं तुम्हें वास्तविक प्रार्थना सिखाता हूँ।"

और पर्याप्त समय लगाकर पर्याप्त प्रयत्न करने के पश्चात् उसने बाइबिल में लिखी हुई प्रार्थना उन्हें सिखाई, उनसे सुनी, और जब तसल्ली हो गई कि वे ठीक प्रकार से सीख गए हैं, तो अपने जहाज़ में बैठकर चल दिए। खुले समुद्र में पहुँचे। एक दिन व्यतीत हो गया। दूसरे दिन प्रातः जहाज़ पर खड़े एक व्यक्ति ने पीछे की ओर देखकर कहा–"दूर वह काला–सा धब्बा क्या है?"

पादरी ने पीछे की ओर देखा; बोला–"कुछ है तो सही जैसे कोई द्वीप हो, परन्तु इधर से तो हम आए हैं। इधर तो कोई द्वीप था नहीं। उन बूढ़ों वाला द्वीप बहुत पीछे रह गया है।"

तभी उस व्यक्ति ने कहा–"पादरी जी! एक नहीं, तीन धब्बे हैं और वे और बड़े हुए जाते हैं।"

पादरी ने भी देखा, बोले–"सचमुच ये तो तीन हैं और बड़े होते जाते हैं, जैसे हमारे समीप आ रहे हों।"

उस व्यक्ति ने कहा–"परन्तु हम तो परे जा रहे हैं।"

तभी पादरी ने ध्यान से देखते हुए कहा–"अरे! यह द्वीप नहीं समुद्री पशु प्रतीत होते हैं। बढ़े चले आ रहे हैं।"

कुछ ही देर में जहाज़वालों ने देखा कि वे पशु नहीं, वे ही तीन वृद्ध है, जिन्हें एक दिन पूर्व उस द्वीप में प्रार्थना सिखाकर आए थे। इस समय तीनों पानी पर दौड़े चले आ रहे थे। हाथ उठाकर आवाज़ भी दे रहे थे। पादरी ने चिल्लाकर कहा–"जहाज़ रोको!"

जहाज़ रुका, परन्तु पादरी महोदय चकित थे कि ये लोग पानी पर कैसे दौड़े रहे हैं? डूबते क्यों नहीं?

शेष पृष्ठ 05 पर ☞

गतांक से आगे–

जीवन विकास के स्वर्णिम सूत्र

आर्यसमाज के नियमों पर एक दृष्टि

● भद्रसेन

जीवन की सफलता का **चौथा मूलमन्त्र है– परोपकार की भावना।** इसीलिए ही छठे नियम में कहा है–

"संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।"

यदि हम संसार के व्यवहार पर दृष्टि डालें, तो स्पष्ट होता है कि यहाँ सब कुछ एक दूसरे के उपकार पर ही टिका हुआ है। सारे भौतिक पदार्थ हमें उपकार के रूप में ही मिलते हैं। प्राकृतिक जगत् की तरह मानव–समाज भी एक दूसरे के उपकार पर ही टिका हुआ है। यदि माता–पिता बच्चे के साथ उपकार न करें तो वह जन्म और जीवन नहीं पा सकता। यही स्थिति परिवार और समाज की भी है। मनुष्य के सामाजिक प्राणी होने से, मानव के सारे कार्य एक दूसरे के सहयोग से ही पूरे होते हैं।

सामाजिक व्यवहार की तरह हमारे शरीर की प्रक्रिया भी परस्पर के सहयोग, उपकार पर टिकी हुई है। संसार और शरीर का व्यवहार ठीक कुएँ की तरह है, जहाँ डिब्बे जल लाकर पाड़छे में डालते हैं, वहाँ से जब नाली में होता हुआ खेत में पहुँचता है और तभी हरी–भरी फसल प्राप्त होती है। इसी प्रकार परस्पर के सहयोग से ही सारी व्यवस्था सुन्दर बन जाती है।

यह उपकार केवल अपनों का ही नहीं, अपितु सारे संसार का है। मनुष्य की उत्कृष्टता दूसरों की भलाई में ही है। अपने लिए तो कौए भी जीते हैं। यदि मनुष्यजन्म पाकर भी हम केवल अपने तक ही सीमित रहें, तो मनुष्यजन्म पाना ही व्यर्थ है।

भारतीय संस्कृति और धर्म की कर्मफल की व्यवस्था के अनुसार शुभकर्मों का अच्छा फल प्राप्त करने के लिए हमें यथाशक्ति यथासम्भव उपकार का कोई न कोई कार्य अवश्य करना चाहिए **(परोपकारः पुण्याय)।**

उपकार की प्रक्रिया और क्रम को ही बताते हुए नियम में कहा है– **शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।** पूर्ववर्ती पर ही पर की उन्नति निर्भर है।

सामाजिक उन्नति की रूपरेखा को स्पष्ट करते हुए सातवें नियम में कहा है– **"सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।"** मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मानवसमाज के प्रत्येक घटक से बिना किसी भेदभाव के मानवता के नाते प्रीतियुक्त अर्थात् सबसे स्नेह का व्यवहार करना चाहिए। वह स्नेह का व्यवहार सामाजिक व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए धर्मानुसार अर्थात् सत्य या शास्त्र की मर्यादा के अनुसार हो। मोहवश किसी से ऐसा स्नेह न हो, कि जिससे धर्म की मर्यादाएँ भंग होने लग पड़ें। जहाँ मानवता के नाते सबसे प्रीतिपूर्वक व्यवहार हो, वहाँ अपराधी को उसके अपराध के अनुसार शास्त्रीय मर्यादा का ध्यान रखते हुए यथायोग्य दण्ड भी देना चाहिए। जैसे परिवार में सबके साथ स्नेह का व्यवहार करते हुए यथायोग्य के ढंग से स्थिति के अनुकूल एक दूसरे से कुछ अन्तर भी रखा जाता है, ऐसे ही समाज में भी इसी ढंग से व्यवहार करना चाहिए।

जीवन–विकास और सामाजिक उन्नति के एक आवश्यक रहस्य को बताते हुए ही अष्टम नियम में कहा है– **"अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।"** क्योंकि अविद्या ही हर प्रकार के दुःख, क्लेश, कष्ट, सन्ताप, परेशानी और अशान्ति का कारण है। जैसे अन्धेरे में ठोकरें ही लगती हैं या भय बना रहता है। वैसे ही अविद्या के कारण मनुष्य उस–उस क्षेत्र में सदा ठोकरें ही खाता है या भय, रोग और बेचैनी को प्राप्त करता है।

आज जिस अशान्ति, बेचैनी से हम परेशान हैं, और चाहते हुए भी उसके जाल से निकल नहीं पाते, इसका एकमात्र कारण अविद्या ही है। न्यायदर्शन में दुःख आदि का कारण मिथ्यादोष को ही कहा गया है। अविद्या का अर्थ है– उलटी विद्या तथा ज्ञान का अभाव। उलटे ज्ञान से व्यक्ति सदा असफल होने के कारण दुःखी और निराश ही होता है। कई बार तो अविद्या (नासमझी) के कारण जान से भी हाथ धोना पड़ जाता है।

योगदर्शन में विस्तार के साथ अविद्या का परिचय दिया गया है और अविद्या को ही हर प्रकार के अन्य क्लेशों, दोषों की जड़ कहा है। ऐसी हानिकारक अविद्या से छुटकारा विद्या द्वारा ही पाया जा सकता है। अतएव सांख्यदर्शन में आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक दुखों से बचने का उपाय सही ज्ञान ही बताया है। **'तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसम्'** तथा **'विद्ययामृतमश्नुते'** यजु. में विद्या से हर प्रकार की मृत्यु के स्थान पर जीवन की प्राप्ति दर्शाई गई है। इसलिए ही भारतीय साहित्य में विद्या की इतनी प्रशंसा की गई है। यदि हम ठण्डे दिल से विचार करें और अपने चारों ओर के व्यवहार को देखें, तो अनुभव होता है कि बिना सोचे–समझे **(अविद्याजन्य)** अर्थात् अनुपयोगी रिवाजों और व्यवहारों को हमने पाल रखा है, जिसके परिणामस्वरूप हम दुःखी हो रहे हैं। तभी तो नीतिशतक में कहा है– **"विवेकभ्रष्टानां विनिपातः शतमुखः**(10)" अविवेक में फँस जाने पर व्यक्ति हर तरह से नीचे ही गिरता जाता है, क्योंकि **"अविवेकः परमापदां पदम्"** (भारवि) अविवेक आपत्तियों की जड़ है। यह एक सुनिश्चित बात है कि हर प्रकार की अविद्या ही दुःख और क्लेश का कारण है और विद्या कार्य की सफलता का मूल है। अतः अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

जीवन और सामाजिक विकास का (नियम 9), मूलमन्त्र है– **"प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिए, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।"**

आप अपनी ज्ञान, बल, धन, यश आदि से जितनी भी तरह से जितनी प्रगति कर सकते हैं, जी सदके कीजिए। पर उसी में संतुष्ट न हो जाइए, अपि तु इसके साथ दूसरों की प्रगति के लिए भी यत्न करना चाहिए। क्योंकि मनुष्य सामाजिक प्राणी है और वह हर तरह से समाज के साथ बँधा हुआ है। अतः अकेले व्यक्ति की उन्नति तब तक उसको पूर्ण सुख नहीं दे सकती, जब तक दूसरों की भी प्रगति न हो। प्रायः एक मछली सारे तालाब को गन्दा कर देती है। ऐसे ही एक पिछड़ा हुआ सब को पीछे धकेल सकता है। तब उसकी हानि दूसरों को भी उठानी पड़ती है।

इस नियम से यह भी स्पष्ट होता है कि व्यक्ति जब उन्नति के साथ दूसरों की उन्नति का ध्यान नहीं रखता, जो वह केवल अपना ही ध्यान रखने के कारण स्वार्थी हो जाता है। स्वार्थ में अन्धा होकर व्यक्ति फिर कुछ भी नहीं सोचता और हर प्रकार का अनुचित से अनुचित कार्य करने में भी नहीं झिझकता। स्वार्थवश वह पशुस्तर पर उतर आता है, तब उसको केवल अपना आप ही दिखाई देता है। क्योंकि– **"स्वार्थी दोषं न पश्यति।"** स्वार्थ से लोभ पनपता है, इसीलिए कहा है– लोभ पाप का बाप है– **"लोभः पापस्य कारणम्"** तथा **"लोभो मूलमनर्थानाम्"** तभी तो भर्तृहरि जी ने कहा है– **"लोभश्चेदगुणेन किम्"** लोभ है तो अन्य बुराइयों की क्या आवश्यकता अर्थात् लोभ के बाद अन्य बुराइयाँ स्वतः आ जाती है।

आज विचारों की दृष्टि से संसार दो भागों में बँटा हुआ है। एक पक्ष व्यक्ति को प्रमुखता देता है, उसकी दृष्टि में व्यक्ति ही सब कुछ है, क्योंकि व्यक्तियों से समाज बनता है। व्यक्ति के विकसित, प्रगतिशील, समृद्ध होने पर ही समाज विकसित, प्रगतिशील और समृद्ध होता है। अतः व्यक्ति ही हर प्रकार के सामाजिक निर्णय का केन्द्रबिन्दु है। उसी को ही सामने रखकर हर व्यवस्था और नियम बनाना चाहिए।

दूसरा पक्ष समाज को ही प्रमुखता देता है, उसकी दृष्टि में समाज से पृथक् व्यक्ति की कोई भी सत्ता नहीं, क्योंकि वह समाज में ही जन्म लेता है और व्यक्ति समाज पर ही हर तरह से निर्भर होता है। इन दोनों प्रकार की विचारधाराओं के कारण ही दोनों गुटों में खींचातानी चल रही है। कई बार विचारों का यह संघर्ष युद्ध के भंयकर रूप को भी धारण कर लेता है और तब ये एक दूसरे के जानी शत्रु के रूप में सामने आ जाते हैं।

वस्तुतः ये दोनों एकांगी दृष्टि से अधूरा देखते हैं, क्योंकि व्यक्तिपन के स्वार्थ से जहाँ व्यक्ति बन कर रह जाता है, तो दूसरी ओर व्यक्ति की वैयक्तिक स्थिति को भुला देने से वह केवल मशीन का पुर्जा बनकर आत्मिक गुणों– (सहानुभूति, दया, क्षमा की भावना) से शून्य होकर परतन्त्र बनकर रह जाता है।

इन दोनों पक्षों के सामञ्जस्य और समाधान को बताते हुए ही दशम नियम में कहा है– **"सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।"**

जितने भी सामाजिक कार्य हैं, जिनका दूसरों पर सीधा प्रभाव पड़ता है, उनमें व्यक्ति को समाज में परतन्त्र रहना चाहिए। परन्तु जिन का समाज पर सीधा प्रभाव नहीं पड़ता, केवल व्यक्ति से ही जिनका सम्बन्ध है, उनमें व्यक्ति स्वतन्त्र है। अतएव योगदर्शन में **यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह) और नियम (शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय एवं ईश्वरप्रणिधान)** के रूप में क्रमशः सामाजिक तथा वैयक्तिक व्यवस्थाओं का संकेत है, जिनको महाव्रत बताया गया है।

नियम में परतन्त्र शब्द को देखकर यह कहना कि परतन्त्रता तो दुःख का मूल है, अतः वह नहीं होनी चाहिए और जो भी बात व्यक्ति की स्वतन्त्रता को छीने, वह ठीक नहीं। परन्तु वास्तविकता तो यह है कि जैसे सड़क के नियम–पालन से सभी सुखी और एक के भी अनियन्त्रित होने से सबको खतरा हो जाता है, ऐसे ही संयम और अनुशासन के साथ सामाजिक नियमों के पालन से ही व्यक्ति और समाज का भला एवं प्रगति होती है। जीवन के दोनों क्षेत्रों में सन्तुलन, समन्वय, सामञ्जस्य होने पर ही जीवन में सुख, शान्ति और सफलता की आशा की जा सकती है।

इस संक्षिप्त विवेचन से सिद्ध होता है कि ये केवल आर्यसमाज के नियम ही नहीं है, अपितु इसके साथ जीवन के सर्वविध विकास के मूलमन्त्र भी है। ये एक ऐसी चाबी हैं, जिन से वैयक्तिक और सामाजिक जीवन के हर क्षेत्र के विकास के द्वार को खोला जा सकता है।

182–शालीमार नगर, होशियारपुर (पंजाब)

उऋण हो गए वे, रह न जाएँ हम भी ऋणी

● देवनारायण भारद्वाज

भारतीय दर्शन चौरासी लाख योनियों की चर्चा करते हैं। हम लोगों के लिए तो असंख्य ही हैं, जो धरती, समुद्र एवं आकाश सर्वत्र ही अपना जीवन चक्र पूरा करते हुए जन्मते व मरते रहते हैं। प्राणियों के इस बृहततिबृहत् समूह में से एक मनुष्य के अतिरिक्त शेष सभी योनियों की एक ही गति है– आहार, निद्रा, भय, मैथुन अथवा स्वसन्तति प्रजनन। इनमें से कोई भी जीव निरर्थक नहीं है। प्रकृति में इन सभी की प्रभावकारी भूमिका है। गहनता से देखें तो ये सभी प्राणी किसी न किसी रूप में पर्यावरण का शोधन कर मनुष्य की सहायता करते हैं। इतने पर भी मनुष्य इनका सदुपयोग कम दुरुपयोग ही अधिक करता है। प्रकृति एवं प्राणियों का अवांछित असन्तुलित दोहन–हनन करके मनुष्य ने न केवल इनका अपितु मानव समुदाय का जीना भी दूभर कर दिया है। विज्ञान जिन आविष्कारों का उपहार संसार के कल्याण के लिए देता है, यह स्वार्थी मनुष्य उनका विनाशकारी प्रयोग करके संसार को रण–मरण क्षरण का श्मशान बना देता है। विश्व के आज 7 अरब से अधिक मनुष्य आकार–प्रकार में समान होते हुए भी यदि वास्तव में वे सब मानव होते, तो वेद को कभी नहीं कहना पड़ता– **"मनुर्भव'** (ऋ 10–53–6) अर्थात् हे मनुष्य! तू मननशील मानव बन।"

हर दिशा में हर ओर असीम आदमी। फिर भी एकाकी अभिशप्त आदमी। धातु का तार जब उसमें विद्युत् प्रवाहित होती है, तो तार नहीं रहता– विद्युत् हो जाता है। यही धनात्मक ऋणात्मक एवं उदासीन विद्युत् के तीन तार प्रकाश, ध्वनि, गति के यन्त्र–उपकरण व यान चलाने लगते हैं। विद्युत् प्रवाह भंग हुआ, तो रह गए तार के तार, सब बेकार। इसी प्रकार पशु सदृश उत्पन्न मनुष्य में जब 'मननशीलता' की विद्युत् धारा का आवेश होता है, तो वह पशु नहीं रहता है, बन जाता है श्रेष्ठ मानव। विद्युत् की भाँति इस 'मननशीलता' की द्युति का प्रवाह निरन्तर होना चाहिए। वेद ने इस तथ्य की पुष्टि में दृढ़ कथ्य इस प्रकार किया है–

पुनर्नः पितरो मनो ददातु दैव्यो जनः।
जीवं व्रातः सचेमहि।। (यजु. 3/55)

भावार्थ– उत्पादक अन्न, शिक्षा व विद्या को देकर रक्षा करने वाले माता–पिता–आचार्य पिता पितरजन पुनः–पुनः धारणावती बुद्धि एवं मननशीलता की शक्ति प्रदान करते हुए समाज में उपकारी दिव्यजनों का निर्माण करें, जिससे सर्वत्र जीवन शक्ति एवं सद्गुणों की सचमुच में वृद्धि होती रहे। मन्त्र–सारांश यह है कि पितरों की शिक्षा के बिना मनुष्यों का जन्म सफल नहीं होता। यन्त्र, उपकरण, यान के संचालन हेतु जिस प्रकार तारों में विद्युत् का प्रवाह आवश्यक है, उसी प्रकार मनुष्य की दिव्यता के लिए आवश्यक है– निरंतर मननशीलता की द्युति का संचार। इस "मननशीलता की द्युति" की लघु संज्ञा है– ऋण। विद्युत् के तीन तारों की भाँति शास्त्रों में यह भी तीन ही हैं– ऋषि ऋण, पितृ ऋण एवं देव ऋण। वेद का संकेत है– **"एतत् तदाग्ने अनृणो भवानि अहतो पितरौ मया।"** (यजु. 19.11) अर्थात् उपकारी विद्वान पितरों की परम्परागत धारा को भंग न करते हुए योग्य सन्तान का निर्माण कर पितृऋण उऋण हो जाते हैं। इस कथन का स्पष्टीकरण अगले मन्त्र में द्रष्टव्य है

अनृणा अस्मिन्ननृणाः परस्मिन् तृतीये लोके अनृणाः स्याम्।
ये देवयानाः पितृयाणाश्च लोकाः सर्वान् पथो, अनृणाः आक्षियेम।।

(अथर्व. 6.117.3)

प्रथम लोक बालपन में विद्यार्थी बन विद्याग्रहण करें, द्वितीय लोक युवापन में पुरुषार्थी बन विद्या प्रयोग से धनार्जन कर गृहस्थ धर्म का पालन करें, साथ ही राष्ट्रोत्थान में स्वयं योग करें तथा इसकी अग्रिम भूमिका हेतु योग्य सन्तान प्रदान करें, और तृतीय लोक व्रतार्थी बन जन–कल्याणार्थ समर्पित हो जाएँ। इस प्रकार ऋषि, पितृ एवं देव ऋण के भार को देवताओं एवं पितरों के मार्गों पर यान–प्रयाण कर उतारते हुए आगे ही आगे बढ़ते रहें। वेदानुसार **"साधु पुत्रं हिरण्यम्"** (अथर्व. 20.129.5) हमारी सन्तानें स्वर्ण सी ज्योतिर्मय सुशील हों। कैसे हों? वेद ने ही बताया– **"मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्"** (ऋ. 10.53.6) अर्थात् मननशीलता की द्युति धारी मानव ही प्रतिभापूर्ण दिव्य सन्तानों को जन्म देकर कर्तव्य परायण नागरिकों से राष्ट्र को समृद्ध करते हैं।

नदियाँ अपने उद्गम से निरन्तर आगे बढ़ती हैं, विद्युत् अपने शक्तिस्रोत से निरन्तर बहती है, ऐसे ही मानव की मननशीलता उसे ऋणों का बोध कराती है और इन्हें निरन्तर उतारते रहने की प्रक्रिया ही व्यक्ति परिवार, राष्ट्र एवं विश्व को सुख–शांति से समृद्ध करती हैं। जिन दिनों लेखक इन पंक्तियों को अंकित कर रहा है, यह श्रुति–सूत्र–नन्दन द्वारा सरस्वती श्री–शैलजा के रक्षा बन्धन को लाने वाले श्रावण पत्र का श्रावण मास है। इसी श्रुति–श्रवण से ही भारत में जन्मते हैं श्रवण कुमार, जो इन्हीं ऋणों को उतारने के लिए अपने अन्धे वृद्ध माता–पिता को काँवर में बैठाकर कन्धों पर चढ़ा लेते हैं। पुण्य तीर्थों का भ्रमण–रमण स्मरण करते हुए वे थकते नहीं, किन्तु मय राष्ट्र की माया का कुप्रभाव देखिए, यहाँ आकर ऋणों को न उतार वे माता–पिता को ही उतार देते हैं, और दूर निकलने पर उनका उन्माद उतर जाता है, तो माता–पिता सादर श्रवण–कन्धों पर फिर से चढ़ जाते हैं।

तब ही नहीं, यहाँ अब भी ऐसा होता है। जनपद इटावा के ग्राम इन्दिरापुरम के वृद्ध रघुवंशी अपने दत्तक पुत्र से बिछुड़ कर स्मृति खो बैठे। उन्मादित दशा में 38 वर्ष तक आगरा के मानसिक चिकित्सालय में रहे। इस बीच में उनका वह दत्तक पुत्र विस्थापित होकर सीतापुर पहुँच गया और सेवानिवृत्त होकर वहीं बस गया। इतने सुदीर्घ अन्तराल के बाद रघुवंशी स्वस्थ हुए ओर उन्हें पुत्र की याद ने सताया। चिकित्सकों तथा अधिकारियों के सतर्क प्रयासों में वृद्ध पुत्र व अतिवृद्ध पिता का मिलन हुआ, तो वहीं पर राम–दशरथ मिलाप के आनन्दोल्लास की वर्षा होती देखी गई।

किसी शायर ने ठीक ही कहा है

"हालात न बदलें तो इस बात पर रोना।
बदलें तो बदलते हुए हालात पर रोना।।"

श्रवण–दर्शन–चिन्तन की त्रिवेणी से प्रकट होता है सजीव मनुष्य। माता का संकल्प श्रवण कर, हरिश्चन्द्र एवं श्रवण कुमार के नाट्य दर्शन कर तथा संस्कृति का चिन्तन कर मोहनदास इंग्लेण्ड गए और स्वदेश लौटकर वे महात्मा गाँधी बने। इसी प्रकार पंडित श्याम जी कृष्ण वर्मा, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस तथा महर्षि अरविन्द आदि के उदाहरण हमारे सम्मुख हैं। पश्चिमी देशों के साथ अविरल आवागमन व निकट सम्पर्क के कारण हम वहाँ की ऊपरी चमक से आकर्षित होकर अपने आन्तरिक चरित्र को खोते जा रहे हैं। दीर्घ प्रवास, दूरदर्शन एवं दूरभाष ने दुनियाँ को इतना छोटा कर दिया है कि जो वहाँ घटित होता है, लगता है मानो हमारे पड़ोस में ही हो रहा है। भारत विकास परिषद् की बहुसंख्य प्रसारित पत्रिका 'नीति' के प्रबन्ध सम्पादक श्री सुरेश चन्द्र, वयस्वी सहयोग मण्डल के सदस्य प्राचार्य गंगा स्वरूप गोयल तथा आर्य समाज के महोपदेशक आचार्य ज्ञानेश्वर ने क्रमशः कनाड़ा, आस्ट्रेलिया एवं इंग्लैण्ड के लम्बे प्रवास से लौटकर भारतीयों की आँखें खोल दीं। विवाहित, अविवाहित एवं अवैध सम्बन्धों से उत्पन्न संतानों का वहाँ घाल मेल हो रहा है। वहाँ का समाज पितृत्व विहीन होने की ओर अग्रसर है।

मातृत्व प्रकृति की स्वाभाविक देन है। पशु–पक्षियों में इसी की प्रचुरता है। इसके साथ पितृत्व के जुड़े रहने पर ही मानवीय संस्कृति का विकास होता है। अमेरिका में अपने माता–पिता के साथ 1960 ई. में 80% बच्चे रहते थे, 1990 ई. में यह संख्या 58% रह गयी, और अब तो यह आंकड़ा 50% भी ही नीचे ही खिसकता जा रहा है। ऐसी दशा में वहाँ की नवपीढ़ी उद्दण्ड उच्छृखल, हिंसक व स्वेच्छाचारी होती चली आ रही है। चलचित्र श्रृंखलाओं से दुष्प्रेरित हमारे यहाँ के युवक व युवा दम्पत्ति अपने माता–पिता आदि से दुर्व्यवहार करने लगे हैं। इसी माह में जब भक्त कन्धों पर काँवरों को लेकर यात्रा कर रहे थे, कुछ पुत्रों ने यहाँ की रामघाट रोड पर अचेतावस्था में अपने वृद्ध पिता को लाकर छोड़ दिया। तीन दिन तक जब वेतन भोगी दायित्वधारियों ने उसकी कोई सुध न ली, तो आखिर यहाँ की लोकप्रिय युवा वाहिनी 'मानव उपकार' संस्था के श्रवण कुमारों–विष्णु कुमार बन्टी तथा नीरज शर्मा शुभम् आदि ने ही उसका उपचार कराया। अखबारों में पुरातन प्रेरक प्रसंगों को छोड़कर हर पंक्ति राष्ट्र नियन्ताओं के अदूरदर्शी, स्वार्थमूलक घृणास्पद कृत्यों की गाथाएँ प्रदर्शित करती प्रतीत हो रही है। हत्याचार, अत्याचार, बलात्कार और आत्म हत्याओं की भरमार में सर्वत्र त्राहि–त्राहि मच रही है।

इसके कारण का पता होते हुए भी निवारण की ओर प्रबन्धकों का ध्यान नहीं है। जैसी सुनी कहानी वैसी बनी जवानी; जैसा पिया पानी, वैसी बनी वाणी; जैसा खाया अन्न–बैसा बना मन; और जैसी देखी दृष्टि वैसी हुई सृष्टि। विश्व में बुद्धि का अपार विस्तार हो रहा है, किन्तु उसका गायत्री गुरुमन्त्र के अनुसार परिष्कार नहीं हो रहा है। एक शायर ने इस दशा को यूँ व्यक्त किया है–

लगे जब से बढ़ने की होशो–खिरद,
लगी साथ बढ़ने परेशानियाँ।
बुढ़ापे की दानाई लेकर कोई,
बदल दे बचपन की नादानियाँ।।

इन पंक्तियों का हिन्दीकरण यूँ करते हैं– डॉ. त्रिलोक तुलसी–

"लगे जब से बढ़ने बोध और बुद्धि,
लगी साथ बढ़ने चिन्ताएँ।

बुढ़ापे की बुद्धिमत्ता लेकर कोई, बदल दे वे बचपन की मूर्खताएँ।।" अन्य स्थानों की भाँति इस अलीगढ़ महानगर के युवक बड़ी संख्या में भौतिक समृद्ध पश्चिमी

देशों में न केवल प्रवास कर रहे हैं, प्रत्युत वहाँ के नागरिक ही बन गए हैं। कुछ तो वहाँ पद–प्रतिष्ठा–ऐश्वर्य प्राप्त कर लेते हैं; पर इनसे भी अधिक संख्या में वे युवक युवतियाँ हैं, जो अपनी सन्तानों द्वारा परित्यक्त वृद्धजनों के घर सेवा का कार्य करके धन अर्जन करते हैं। जिन हेय अखाद्य दूषित वस्तुओं को वे भारत में छूना पसन्द नहीं करते हैं; उन्हीं को पकाकर उन वृद्धों को खिलाते हैं। अलीगढ़ में भारत विकास परिषद, वयस्वी सहयोग मण्डल, तथा ब्रह्म विद्या सत्संग की त्रिवेणी को बहाने वाले प्रो. राजकुमार वार्ष्णेय उपरोक्त सभी परिस्थितियों से सुपरिचित थे। इसीलिए वे अपने ज्येष्ठ पुत्र के सम्पन्न परिवार को अमेरिका से समय–समय पर भारत बुलाकर संस्कारित करते रहते थे, और स्वयं भी लम्बी अवधि वहाँ बिताते थे, और परिवार ही नहीं प्रवासी भारतीयों को भी संस्कारित करते रहते थे। उनके पौत्र लव एवं कुश जब किशोर हुए तो उन्हें यज्ञोपवीत संस्कार के लिए भारत बुलाया गया, जब उन किशोरों को बड़े होने पर राष्ट्र स्तरीय उच्च छात्रवृत्तियाँ मिलीं, तब भी उन्हें प्रभु कृतज्ञता यज्ञ का करके संस्कृति का सान्निध्य प्रदान किया गया। ये युवक भी अपने दादी–बाबा व परिवार से दूरसंचार द्वारा सदैव जुड़े रहे। इसीलिए यह परिवार अमेरिका में जब दीपावली पर्व मनाता है, तो इसे अनुकरणीय समझकर उनका आस–पास व संस्थान भी इसे मनाने लगते हैं।

अकेला चना भाड़ तो नहीं फोड़ सकता है, पर वह उस भूमि को अवश्य फोड़ सकता है, जिस पर वह भाड़ खड़ा होता है। चना गल–समर्पित होकर अंकुर उपजाता है, जो भूमि को फोड़कर पादप बन जाता है, जिसमें से एक के स्थान पर अनेकानेक चने किसान के हाथ में आ जाते हैं। ऐसे ही प्रोफेसर साहब ने अनेक संस्थाओं को खड़ा कर नगर के आबाल–वृद्धजन एवं दम्पतियों को आधुनिकीकरण, बिना पश्चिमीकरण की उन्नत दिशा की ओर मोड़ दिया। उन्होंने नगर के मेधावी छात्रों के पुरस्कार, निर्धन छात्रों के शुल्क सहकार, निर्धन कन्याओं हेतु शिक्षा स्वास्थ्य एवं विवाह संस्कार के प्रकल्पों को कार्यान्वित किया। राष्ट्रीय समूहगान प्रतियोगिताओं द्वारा छात्रों में देश भक्ति संचार, वरिष्ठ नागरिकों की गोष्ठियों व शिविरों द्वारा परोपकार का वातावरण निर्मित्त कर दिया। सुख सुविधाओं में निमग्न उच्च पदों से सेवा निवृत्त विभूतियों को उनकी क्षमतानुसार समाजोत्थान के कार्यों में संलग्न कर दिया। कोई लेखक, कोई उपदेशक, प्रवक्ता, कोई अर्थ संपोषक, कोई औषधि रहित चिकित्सक, कोई प्रशिक्षक और कोई उत्तम व्यवस्थापक बनकर नए–नए कर्तव्यों का पालन करके, समाज के अभ्युदय का आधार बन गया। स्वयं अपनी धर्मपत्नी नर्वदा देवी को साथ लेकर आर्य समाज के गुरुकुल में पहुँच जाते थे, उनके कनिष्ठ पुत्र प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. प्रवीण अत्यन्त व्यस्त होते थे, तो पुत्रवधू श्रीमती ऋषिभा कार चलाकर ले जाती। यज्ञोपरान्त ब्रह्मचारियों को सम्बोधित करते श्रीमती नर्मदा जी हर बच्चे के पास जाकर उसे दुलारती और बिस्कुट का पैकेट पकड़ा कर आगे बढ़ जाती और ऋषिभा भी गुरुकुल के लिए दान कर आतीं।

हम सभी का मन श्रद्धा में करता नमन–अनुगमन। आपने अपने कर्तव्य धर्मी ऋणों को स्वीकार किया और उन्हें उतार कर उऋण हो गए। प्रभु वर! हम लोगों को भी ऋणों के आभास बोध दें तथा इन्हें उतारने का सम्बोध दें, ताकि हम ऋणी लोग भी राष्ट्र, समाज–कल्याण के लिए कृत संकल्प होकर उऋण हो सकें।

'वरेण्यम्' एम.आई.जी
भूखण्ड सं. 45, अवन्तिका कालोनी
(ए.डी.ए.) रामघाट मार्ग
जिला– अलीगढ़ (उ.प्र.)३म्

☞ *पृष्ठ 02 का शेष*

बोध कथाएँ...

उन तीनों बूढ़ों ने जहाज़ में आकर कहा–"पादरी महोदय! हम अनपढ़ व्यक्ति हैं। आप जो प्रार्थना हमें सिखा आए थे, वह हम भूल गए। उसके शब्द ठीक प्रकार स्मरण नहीं आते। कृपा कर उन्हें फिर से सिखाइए।"

पादरी ने आश्चर्य से उनकी ओर देखा; बोले–"और तुम पानी पर दौड़े किस प्रकार?"

एक वृद्ध ने कहा–"यह तो साधारण बात है पादरी महोदय! हम भगवान् से बोले–हमें पादरी महोदय के पास जाना है। नौका हमारे पास है नहीं। दौड़ हम लेंगे। तुम कृपा करो कि हम दौड़ते चले जाएँ, पानी में डूब न जाएँ, और हम चल पड़े!"

पादरी ने हाथ जोड़ दिए; उनके सामने सिर झुकाकर धीर से बोला–"महात्मा लोगो, तुम वापस जाओ। वही प्रार्थना करो, जो पहले किया करते थे। ईश्वर तुम्हारे हृदय की आवाज़ सुनता है। उसे शब्दों की आवश्यकता नहीं।"

यह एक काल्पनिक कहानी है। लेखक महोदय इस कथा से यह बताना चाहते हैं कि आनन्द–सिंधु, करुणा का सागर भगवान् हृदय के प्यार को देखता है। आपके हृदय में उसके लिए प्यार है तो वह मिलेगा अवश्य।

तुलसी अपने राम को, हीज भजो या खीज।
भूमि पड़े उपजेंगे ही, उलटे सीधे बीज।।

प्रभु–भजन में तन्मयता

अकबर बादशाह दिन–भर यात्रा करते हुए बाहर दूर निकल गए। चलते–चलते नमाज़ का समय हो गया। तब मार्ग में ही एक ओर नमाज़ का वस्त्र बिछाकर दो–ज़ानु हो गए। उधर एक नवयुवती अपने पतिदेव को खोजती आ रही थी। उसके पतिदेव प्रातः के गए घर नहीं लौटे थे। यह सच्ची देवी पति–वियोग में उन्मत्त इधर–उधर दृष्टि डालती जा रही थी–अपने विचार में निमग्न। उसने नमाज़ का कपड़ा देखा नहीं और उसी के ऊपर पग रखती आगे बढ़ती गई। अकबर को उसकी गुस्ताख़ी पर क्रोध तो आया, परन्तु चुप साधे रखी। थोड़ी ही देर में जब वह युवती अपने पतिदेव के साथ लौटी तो अकबर कहने लगा–"तुझे दिखा नहीं मैं नमाज़ में, प्रभु–भक्ति में था? तुझे जाए–नमाज़ भी नज़र नहीं पड़ा? पग रखती चली गई?"

युवती ने बड़े धैर्य से एक दोहा पढ़ा–

नर–राची सूझी नहीं, तुम कस लख्यो सुजान?
कुरान पढ़त बौरे भये, नहि राच्यो रहमान।।

"मैं तो अपने पतिदेव की खोज में गुम हो चुकी थी, जिससे मुझे कुछ सूझा नहीं, परन्तु तुम तो प्रभु–भजन में लीन थे, तुमने मुझे कैसे देख लिया? मालूम होता है कि कुरान ही पढ़–पढ़ बौरा गए हो, भगवान् में अभी प्रीति नहीं हुई।"

अकबर यह उत्तर सुनकर अवाक् रह गया और बतलाया जाता है कि वह अक्सर लम्बा श्वास लेकर यही दोहा बार–बार दोहराया करता था।

माँगना है जो कुछ खुदा से माँग

बादशाह अकबर एक दिन जंगल में आखेट कर रहे थे। भटककर रास्ता भूल गए। देर हो गई तो प्यास और भूख सताने लगी। ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे प्राण होंठो पर आ गए हों। तभी एक खेत देखा उन्होंने। उसके किनारे पर एक किसान खड़ा था। किसान के पास आकर बोले–"तुम्हारे पास कुछ खाने को है?"

किसान ने कहा–"क्यों नहीं, आओ बैठो!" और बादशाह को उसने अपने पास की रूखी–सूखी रोटी खिला दी; दूर से लाकर पानी भी पिला दिया। खा–पीकर बादशाह प्रसन्न हुआ; किसान से बोला–"तुम क्या काम करते हो?"

किसान ने कहा–"खेती–बाड़ी करता हूँ, बहुत कठिनता से जीवन–निर्वाह होता है।"

अकबर ने कहा–"सुनो! मैं हूँ भारत का बादशाह। कभी आवश्यकता पड़े तो मेरे पास आगरा आना।" यह कहकर वह चला गया।

तब कई वर्ष बीत गए। एक बार वर्षा न हुई। किसान का खेत सूख गया। उसने सोचा–बादशाह के पास चलता हूँ, उससे कुछ मदद माँगूँगा। वह अपने गाँव से चला और राजधानी में पहुँचा। देखा, बादशाह की सवारी जा रही है। बहुत बड़ा लाव–लश्कर उसके साथ है। बादशाह हाथी पर बैठा है। किसान ने देखते ही आवाज़ दी–"अकबरा. ..ओ अकबरा!"

सुननेवाले आश्चर्यचकित रह गए कि यह कौन असभ्य आ गया? किसी ने कहा–"इसका सिर काट दो! यह असभ्य है!"

अकबर ने भी आवाज़ को सुना। दूर से इसको देखा, पहचान लिया। उसे अपने पास बुलाया। हाथी पर अपने पास बैठा लिया। महल में पहुँचा तो नौकरों को आज्ञा दी कि 'यह मेरे ही कमरे में सोएगा। इसने मेरी जान बचाई थी। मेरे कमरे में इसके लिए पलँग लगा दो।' रात को अपने साथ ही खाना खिलाया। उसके सो जाने पर सोया।

प्रातःकाल किसान उठा तो देखा कि बादशाह एक कपड़ा बिछाकर उसपर बैठे हैं। घुटने टेककर, हाथ फैलाकर, पता नहीं किससे क्या माँग रहे हैं। बादशाह नमाज़ पढ़ रहा था। निवृत्त हुआ तो किसान ने पूछा–"यह तुम क्या करते थे?"

बादशाह ने कहा–"आशीर्वाद माँगता था।"

किसान ने कहा–"किससे?"

बादशाह ने कहा–"भगवान् से।"

किसान ने कहा–"अच्छा।" और अपनी लाठी उठाकर चल पड़ा।

बादशाह ने कहा–"अरे तुम कहाँ जाते हो? यह तो बताओ कि तुम किसलिए आए थे?"

किसान ने कहा–"बादशाह! मैं आया था तुमसे मदद माँगने, परन्तु यहाँ आकर देखा कि तुम भी माँगते हो। उसी से मैं भी माँग लूँगा। तुम स्वयं भिखारी हो, तुमसे क्या माँगूँगा मैं!"

ऐसा अटल विश्वास जिसके हृदय में है, वही परमात्मा की उपासना का अधिकारी है।

'मीर' बन्दों से काम कब निकला।
माँगना है जो कुछ खुदा से माँग।।

क्रमशः

शुद्ध वायु और जल मानव के लिए अपरिहार्य हैं

● डॉ. रोचमा भारती

पृथ्वी पर होनेवाली कुछ रासायनिक क्रियाओं से पर्यावरण में फैलने वाले प्रदूषण के कारण आकाश में स्थित ओजोन वायु की परत में एक बड़ा छिद्र बन गया है, यदि इसी गति से छिद्र होते रहे तो पराबैंगनी (अल्ट्रा वायलेट) किरणों को रोकना संभव नहीं होगा, परिणामतः लोग कैंसर, आंखों में ग्रन्थि, त्वचा आदि के अनेक भयंकर रोगों से ग्रस्त होंगे तथा अन्य जीव, वृक्ष वनस्पति भी प्रभावित होंगे।

समस्त विश्व के समस्त प्राणी जगत् में प्रदूषित पर्यावरण की समस्या का मूल कारण है मनुष्य द्वारा अनेक यन्त्रों का आविष्कार और उन यन्त्रों का अत्यधिक प्रयोग करते हुए उससे उत्पन्न सुख के साथ–साथ होने वाले हानिकारक दूसरे पक्ष को अनदेखा करना है। किसी भी मूल्य पर और किसी भी प्रकार से धन अर्जित करने, ऐशो–आराम को भोगने की इच्छा ने जीव जगत्, नदी, पर्वत, जंगल, पृथ्वी और खनिज पदार्थों पर मानों धावा ही बोल दिया है। आज वन–संपदा तेज़ी से नष्ट हो रही है अतः अनेकों वनस्पतियाँ, वन्य–जीव जिनका हमारे जीवन से गहरा सरोकार है, समाप्त हो गए हैं, या समाप्ति के कगार पर हैं।

आज सम्पूर्ण विश्व में पर्यावरण प्रदूषण रूपी महाभयंकर भस्मासुर हवा, पानी ही नहीं पृथ्वी, आकाश, ध्वनि, आकाश आदि समस्त महत्त्वपूर्ण संसाधनों को भस्म कर रहा है, दूषित कर रहा है। इस दूषित पर्यावरण में उत्पन्न भौतिक पदार्थों से अन्न वनस्पतियाँ आदि खाद्य पदार्थ भी दूषित हो गए हैं। इन दूषित खाद्य पदार्थों के उपयोग से मनुष्य के शरीर में बनने वाले रक्त–मांसादि धातुएँ भी अशुद्ध, निर्बल और निकृष्ट बन चुकी हैं। इन सभी रसों धातुओं के आधार से बने शरीर में काम करने वाले मन, बुद्धि भी विकृत बन गए हैं।

पर्यावरण विज्ञानियों ने धरती के बिगड़ते पर्यावरण पर अनेक स्तरों से चिंता प्रगट करते हुए वैदिक वाङ्मय के आधार पर पर्यावरणीय विषयक शुद्धता के अनेक महत्त्वपूर्ण सूत्र **हैं**, और मंत्र सुझाये हैं जो आज भी अत्यंत प्रासंगिक हैं जिन्हें पंचमहाभूत प्रकृति की शुद्धता के लिए पवित्रता के लिए आवश्यक बताया गया है। सृष्टि की प्रक्रिया निरंतर आदान–प्रदान एवं संप्रेषण से चलती रहती है। आज इनमें असंतुलन बढ़ने के कारण प्राणीमात्र का जीवन संकट ग्रस्त होता जा रहा है। मानव और पर्यावरण का अन्योन्याश्रित संबंध है। पर्यावरण की सुरक्षा और शुद्धि किसी एक देश या किसी एक मानव समूह का नहीं अपितु संपूर्ण विश्व का दायित्व है। वेद के ऋषि जहाँ सभी के लिए भद्र कामना करते हैं वहां वेद की ऋचाएं घुलोक, पृथ्वीलोक, आगे–पीछे, ऊपर–नीचे सर्वत्र अभय का वरदान चाहती हैं। इसके लिए सब दिशाओं में पर्यावरण सन्तुलन की कामना करते हुए अथर्ववेद कहता है कि–

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु।। अथर्व .19.15.15

(अर्थात् हे प्रभो! आप अपनी कृपा से अंतरिक्ष, द्युलोक और पृथिवीलोक को हमारे लिऐ अभय देने वाला करें, हमें इनसे किसी प्रकार का भय–अकल्याण प्राप्त न होवे। हमें अदृश्य स्थान से, उच्च वा निम्न या छिपे स्थानों से अर्थात् सर्वत्र अभय प्राप्त हो।)

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।। –अथर्व.19.15.16

(अर्थात् हे प्रभो! आपकी अपनी दया से मित्र, शत्रु, ज्ञात–अज्ञात सभी पुरुषों से हमें अभय प्राप्त हो। रात्री के अंधकार और दिन के प्रकाश में भी हमें अभय प्राप्त हो। सभी दिशाएँ हमारी मित्र बन जाएँ सभी ओर से हमारा कल्याण हो। समस्त दिशाएँ हमारे लिए मंगल, अभय और सुख देने वाली हों।)

प्राचीन काल में प्रदूषण की सघनता कम थी तथापि वन संस्कृति के पूर्ण विकसित होने के कारण वृक्षों की अधिकता थी। मनुष्य की दैनिक क्रियाओं से उत्पन्न न्यून से प्रदूषण की क्षति पूर्ति के उपाय के रूप में वैदिक परंपरा में यज्ञों का प्रचलन था। आज भी प्रत्येक मनुष्य के लिए उसके व्यक्तिगत रूप से किए गए दैनिक प्रदूषण से होनेवाली पर्यावरण की क्षतिपूर्ति हेतु यज्ञ में आरोग्यवर्धक, कीटाणुनाशक, सुगंधित सामग्री, घी तथा समिधाओं से दैनिक सोलह आहुतियाँ देना अनिवार्य है। समय–समय पर दीर्घकालीन यज्ञों का विस्तार भी होना चाहिए।

इस विशद् परिशीलन से कहा जा सकता है कि आधुनिक कीटाणुनाशक दवाइयाँ आदि उपाय एकांगी एवं मानव के क्षणिक हितों के रूप में निरूपित किए गए हैं। किंतु वैदिक चिंतन में निरूपित उपाय समग्रता लिए हुए सर्वांगीण एवं सार्व कालिक हैं। ऋषियों द्वारा बताए गए उपाय केवलमात्र मानवीय हितों पर ही केंद्रित नहीं हैं अपितु उनमें पूर्ण पारिस्थितिक संतुलन की सदिच्छा निहित है तथा इसी में मानव का पूर्ण और वास्तविक हित सुरक्षित है।

इक्कीसवी सदी के प्रारम्भ होने के साथ ही एक नए युग में प्रवेश करते हुए हम प्रदूषण के दानव से प्राणिमात्र के जीवित रहने की इस पहली आवश्यकता पर्यावरण की शुद्धता को शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण कर सकें तो यह हमारी सबसे बड़ी उपलब्धि होगी। इस सहस्राब्धि में हम विगत शताब्दियों की उपलब्धियों तथा हानियों का पुनर्मूल्यांकन करें। प्राचीन सर्वहितकारी परम्पराओं और कर्त्तव्यों को जो विस्मृति के कगार पर पहुँच रहे हैं, उन्हें पुनः स्थापित करना हमारा प्रथम दायित्व है। पन्चमहाभूत प्रकृति तथा समस्त चराचर प्राणी जगत् को प्रदूषण रूपी यमदूत से यज्ञ–विज्ञान द्वारा तथा अन्य सभी सुरक्षित उपायों द्वारा भी हम स्वच्छ, मुक्त और निर्दोष बनाएं, यही पंचवतत्वों की, पर्यावरण की रक्षा का मूल मंत्र है।

भारतीय संस्कृति यज्ञपरक संस्कृति रही है। ऋषि मुनि ही नहीं अपितु गृहस्थ भी नित्य प्रति याज्ञिक अनुष्ठान करते थे। यज्ञों के द्वारा जहाँ वायुमंडल पवित्र होता था, वहीं पर्यावरण का भी सरंक्षण हो जाता था क्योंकि विविध प्रकार की औषधियों, वनस्पतियों को यज्ञीय अग्नि में डालने से अनेक प्रकार के रोग–कृमियों और विषैली गैसों का नाश हो जाता था। यज्ञ प्रकृति के स्थूल तत्त्वों में शक्ति और सुगंध भरता है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, और आकाश– इन पांच तत्त्वों से सृष्टि की सरंचना हुई है और इन्ही पांच तत्त्वों के सूक्ष्मांश से मानव शरीर की निर्मिति हुई है।

वेदों में पर्यावरणीय तत्त्वों तथा मनुष्य का परस्पर सम्बन्ध बताते हुए कहा है–

यत्पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे– (अर्थात् जो पंचमहाभूत प्रकृति में है, उसी से यह शरीर भी बना है।) अथर्ववेद में कहा है–

सूर्यो मे चक्षुर्वातःप्राणोऽन्तरिक्षमात्मा पृथिवी शरीरम्।
अस्तृतो नामाहमयमस्मि स आत्मानं नि दधे द्यावापृथिव्यां गोपीथाय।। –अथर्ववेद.5.2.7

(अर्थात् सूर्य मेरा नेत्र है, वायु मेरा प्राण है, अन्तरिक्ष मेरी आत्मा (ह्रदय) है और पृथिवी मेरा शरीर है। मैं अपने आपको अपराजित समझ कर द्यावा और पृथिवी के बीच में सुरक्षित रखता हूँ।)

यह मन्त्र पिण्ड और ब्रह्माण्ड का स्पष्ट सम्बन्ध बतलाता है। यजुर्वेद के दूसरे स्थानों में है कि–

शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत यस्य वातः प्राणाप्राणौ।
नाभ्याऽसी अन्तरिक्षं, दिशःश्रोत्रं, पद्भ्यां भूमिः।।

(अर्थात् द्यौ शिर, वायु प्राण, अन्तरिक्ष नाभि, दिशा कान और भूमि पैर है। यहाँ भी वही सम्बन्ध वर्णित है। वेदों में इस प्रकार के बहुत वर्णन हैं। इन उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि पिण्ड के साथ ब्रह्माण्ड का घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह बात प्रत्यक्ष भी है कि हम बिना वायु सास नहीं ले सकते और बिना पृथ्वी के खड़े नहीं हो सकते।

यह भी कहा है कि ब्रह्माण्ड के पंच तत्वों से यह शरीर बना है, अन्त में उन्हीं पांच तत्वों में शरीर विलीन हो जाता है, समा जाता है। ऋग्वेद में शरीर रूपी पंचतत्वों के पर्यावरणीय पंचतत्व में समा जाने का आदेश है–

ओं सूर्यं चक्षुर्गच्छतु वातमात्म।, द्यां च गच्छ पृथ्वीं च धर्मणा।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतिऽतिष्ठा शरीरैः। स्वाहा।। ऋग्वेद.10.16.3

(अर्थात् प्राकृतिक नियमों तथा स्वकृत कर्मों के अनुसार तेरा नेत्र (दर्शन शक्ति) अपने कारणीभूत सूर्य को प्राप्त होवे और प्राणशक्ति अंतरिक्ष वायु को प्राप्त हो और तू स्वयं द्यौ लोक अथवा पृथ्वी लोक को यथा कर्म प्राप्त हो। यदि ईश व्यवस्थानुसार वनस्पति जगत् में तुझे जाना है, तो तू सूक्ष्म शरीर द्वारा जलों को प्राप्त हों।)

तात्पर्य यह है कि पृथ्वी जल वायु अग्नि आकाश, सूर्य मनुष्य, जलचर, नभचर थलचर, वनस्पतियाँ औषधियाँ, वृक्ष, आदि की रक्षा–सुरक्षा का ध्यान रखना सभी मनुष्यों का कर्त्तव्य है। शुद्ध वायु और जल मानव के लिए अपरिहार्य हैं, क्योंकि हमारे प्राणों में शक्ति का संचार वायु से ही होता है। जीवन का आधार है जलीय तत्व जो रक्त के रूप में हमारी धमनियों में प्रवाहित होता है। घी, दूध, अन्न तथा विभिन्न वनस्पतियों एवं आरण्यक औषधियों को सामग्री के रूप में आहूत करने से अग्नि वायुमंडल में फैले विषैले जीवाणुओं और कीटाणुओं को नष्ट कर देता है। यज्ञाग्नि से वायु सुरक्षित एवं सुवासित हो जाती है। फलस्वरूप हमारी प्राण–शक्ति, बल एवं ऊर्जा संपन्न होकर आरोग्य वर्धक हो जाती है। जैसे मुख से लिया गया भोजन पूरे शरीर को मिलता है, वैसे ही यज्ञ जो इस ब्रह्माण्ड का मुख है उसमें जो भी पौष्टिक रोगनाशक वस्तुएँ डाली जाती हैं, वे सभी धूंए के रूप में प्राणी जगत् और पर्यावरण को मिलते हैं।

'यज्ञ से होगा सुनहरा कल' से साभार

लाला साईंदास

● डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी

लाला साईंदास जी का जन्म सन् 1840 ई. में गाँव लसाड़ा जिला जालंधर में हुआ। उनके पिता ला. धन्नामल जी थे। उनके सत्कार्यों के कारण लोग उन्हें धन्ना–भक्त कहते थे। धार्मिक संस्कार व परोपकार करने की प्रेरणा लाला जी ने अपने पिता जी से ग्रहण की थी। अमृतसर से दसवीं की कक्षा पास कर वे लाहौर आ गए तथा डाकघर में कार्य करने लगे। शीघ्र ही उन्होंने अरबी, फारसी की अच्छी शिक्षा प्राप्त कर ली। तत्पश्चात् लाला जी पंजाब सरकार के अनुवाद विभाग में कार्य करने लगे, जहाँ उन्होंने अच्छी ख्याति प्राप्त की। एक बार अफगानिस्तान से एक प्रतिनिधि मण्डल ले. गवर्नर से मिलने आया तो इस अफगान प्रतिनिधि मण्डल तथा गवर्नर के मध्य दुभाषिए का कार्य उन्हें सौंपा गया था। उन्होंने इस कार्य को इतनी सफलता से किया कि उनकी योग्यता से गवर्नर महोदय भी प्रभावित हुए बिना न रह सके।

जब महर्षि दयानन्द सरस्वती लाहौर पधारे तो युवक साईंदास ने उनके प्रवचनों को ध्यानपूर्वक सुना और उन्हें जीवन में उतारने का सफल प्रयास किया। इसके पश्चात् उनके मन पर आर्य समाज का इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वे युवकों को खोज–खोजकर आर्य समाज में लाते थे। अपने कार्य से अवकाश पाते ही वे राजकीय कॉलेज लाहौर में जाते थे, जहाँ वे युवकों को आर्य समाज में लाने का प्रयास करते थे। ला. लाजपत राय, महात्मा हंसराज जैसे महापुरुष आर्य समाज को इन्हीं की देन है। वे पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी को पुत्रवत् स्नेह करते थे। ला. साईंदास जी को 130 रुपये वेतन प्राप्त होता था। उनकी आर्य समाज के प्रति निष्ठा का इससे बड़ा क्या उदाहरण हो सकता है कि वेतन मिलते ही, वेतन का 10 प्रतिशत आर्य समाज और 10 प्रतिशत डी.ए.वी. फण्ड में दे देते थे। लाहौर में आर्य समाज की स्थापना होने पर राय बहादुर ला. मूलराज जी आर्य समाज के प्रथम प्रधान बने तथा साईंदास जी को आर्य समाज का प्रधान बनाया गए। ला. मूलराज के पश्चात् ला. साईंदास जी को आर्य समाज का प्रधान बनाया गया। वे अपनी मृत्यु–पर्यन्त आर्य समाज लाहौर के प्रधान रहे।

वे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अनेक वर्षों तक प्रधान रहे। वे महर्षि दयानन्द की स्मृति के रूप में स्थापित डी.ए.वी. विद्यालय के विचार के मूल जनक थे। उनसे प्रेरणा और उत्साह पाकर ही पं. गुरुदत्त विद्यार्थी और महात्मा हंसराज जी कार्य करते थे। डी.ए.वी. को आर्यत्व प्रदान करने वाले व्यक्तियों में वे प्रथम स्थान पर रहे। डी.ए.वी. कॉलेज लाहौर की स्थापना में उनका योगदान सदैव स्मरणीय रहेगा।

सन् 1890 ई. में मात्र 49 वर्ष की आयु में उन्होंने अपनी इहलीला समाप्त की। उनकी मृत्यु का डी.ए.वी. आन्दोलन पर बहुत बुरा प्रभाव पडा, जिससे डी.ए.वी. के कार्यकर्ता दो भागों में बँट गए और डी.ए.वी. कॉलेज की प्रगति में भी बाधा पड़ी। जिसका वर्णन डी.ए.वी. के प्रधान ला. लालचन्द जी ने अपनी रिपोर्ट में इस प्रकार किया। "कमेटी अपने दो अनन्य कार्यकर्ताओं और सहयोगियों ला. साईंदास

और पं. गुरुदत्त विद्यार्थी की क्रूर मृत्यु से बुरी तरह प्रभावित हुई, जिसका बुरा प्रभाव कॉलेज की आर्थिक तथा शैक्षणिक स्थिति पर पड़ा। इस वर्ष कमेटी को 2000 रुपये सदस्यता शुल्क कम प्राप्त हुआ तथा यूनिवर्सिटी में भी दसवीं का परीक्षा परिणाम पहले जैसा नहीं रहा।"

–डी.ए.वी. आन्दोलन का इतिहास से साभार

और ये अगरबत्तियाँ

● ओम प्रकाश आर्य

यजुर्वेद के 74 मंत्रों के देवता यज्ञ है। यज्ञ का शाब्दिक अर्थ है– देवपूजा, संगतिकरण और दान। देवपूजा अर्थात् अग्निहोत्र के माध्यम से प्रज्वलित अग्नि में घी और सामग्री से आहुति प्रदान करना। इस वैज्ञानिक प्रक्रिया के माध्यम से वातावरण की शुद्धि होती है जिसके लिए वेद में बार–बार यज्ञ करने पर बल दिया गया है। इस आधुनिक सभ्य मानव के पास इतना समय नहीं कि वे यज्ञ कर सकें। इसलिए उसने सस्ता और शॉर्टकट रास्ता ढूँढ लिया कि अगरबत्तियाँ जलाकर भगवान को प्रसन्न कर लिया जाए और वातावरण की शुद्धि भी हो जाए। क्या यह विधि उचित है? आइए, इस पर विचार करें–

राजस्थान पत्रिका 5–2–2018 में एक समाचार प्रकाशित हुआ– "अगरबत्ती के धुएँ से कैंसर का खतरा।" उस समाचार को ज्यों का त्यों उद्धृत कर रहा हूँ– "चीन के एक शोध में दावा किया गया है कि अगरबत्ती से निकलने वाला धुआँ सिगरेट से भी खतरनाक साबित हो सकता है। अगरबत्ती के धुएँ के साथ बारीक कण निकलते हैं जो हवा में घुलमिल जाते हैं। अध्ययन के अनुसार सुगंधित अगरबत्ती के धुएँ में म्युटाजेनिक, जीनोटाक्सिक, साइटोटाक्सिक जैसे विषैले तत्त्व होते हैं जिनसे कैंसर होने का खतरा रहता है। अगरबत्ती के हानिकारक धुएँ से शरीर में मौजूद जीन का रूप परिवर्तित हो जाता है जो कैंसर और फेफडों से जुड़ी बीमारियाँ होने की पहली स्टेज है और जेनेटिक म्यूटेशन से डीएनए में भी परिवर्तन हो सकता है।"

उक्त समाचार दिल दहलाने वाला है। आज हर मंदिर में, दुकान में, घर में, पूजापाठ में, धार्मिक अनुष्ठान में, किसी चीज के उद्घाटन के अवसर पर बिना किसी झिझक के अगरबत्तियाँ सुलगाई जाती हैं। घरों में तो भगवान को प्रसन्न करने के लिए आमजन इसका प्रयोग करते ही हैं। यदि उस समाचार पर विचार किया जाए तो पता चलेगा कि लोग कैंसर जैसी घातक बीमारी को अगरबत्ती जलाकर स्वयं निमंत्रण दे रहे हैं। इतना सस्ता नुस्खा जानलेवा साबित हो सकता है। इसलिए इसका परित्याग करके इसके स्थान पर गोघृत का दीपक जला लें तो ज्यादा अच्छा रहेगा, क्योंकि 10 ग्राम गोघृत को दीपक में जलाने से अथवा यज्ञ में आहुति डालने से लगभग 1 टन प्राणवायु उत्पन्न होती है तथा उससे वायुमण्डल में एटोमिक रेडिएशन का प्रभाव कम हो जाता है। (–आर्यावर्त केसरी 10–16 मार्च 2015) "गाय के घी में वैक्सीन एसिड, ब्यूटिक एसिड, बीटा कैरोटीन जैसे तत्त्व पाए जाते हैं। जो शरीर में पैदा होने वाले कैंसरीय तत्त्वों से लड़ने की क्षमता रखते हैं। (उक्त ले. कीर्तिवर्धन)।

इससे सिद्ध हो रहा है कि यज्ञ एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है और ये अगरबत्तियाँ जलाना अवैज्ञानिक हानिकारक तरीका है। सिगरेट के धुएँ से भी खतरनाक इसका परित्याग करना सर्वथा उचित है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने यज्ञ करने पर बल दिया है न कि अगरबत्ती सुलगाने पर। वे सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में लिखते हैं, "प्रत्येक मनुष्य को सोलह–सोलह आहुति और छः छः माशे घृतादि एक–एक आहुति का परिमाण न्यून से न्यून चाहिए और जो इससे अधिक करे तो बहुत अच्छा है।" वे लिखते हैं, "होम का करना अत्यावश्यक है।" घी में ही वह सामर्थ्य है जो दुर्गन्धित वायु को बाहर निकाल सकती है। अगरबत्तियों में वह गुण नहीं है क्योंकि सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में ऋषि प्रश्न करते हैं, "केशर, कस्तूरी, सुगन्धित पुष्प और अतर आदि के घर में रखने से सुगन्धित वायु होकर सुखकारक होगा।" वे इसका उत्तर देते हैं, "उस सुगन्ध का वह सामर्थ्य नहीं है कि गृहस्थ वायु को बाहर निकालकर शुद्ध वायु को प्रवेश करा सके क्योंकि उसमें भेदक शक्ति नहीं है।" उक्त उदाहरण से स्पष्ट हो गया कि अगरबत्ती में भेदक शक्ति नहीं हैं जो वायु को बाहर निकाल सके। इसलिए जहाँ ये अगरबत्तियाँ जलाई जाती हैं वहाँ की वायु वैसे का वैसे ही रहती है और वह विषाक्त तत्वों से मिली होने के कारण रोगोत्पन्न करने का कारण बन जाती है। अग्नि का प्रज्वलित होना आवश्यक है। यह वैज्ञानिक विधि है।

कैंसरकारक सस्ते नुस्खे न अपनाकर यज्ञ की ओर लौटने से कल्याण होगा। यह ऋषियों का दिया हुआ बहुत बड़ा विज्ञान है। यज्ञ पर अनेक शोध हुए हैं और सबने यह सिद्ध किया है कि यह लाभकारी है। अगरबत्तियों पर अनेक बार लेख प्रकाशित हुए हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इस पर और शोध होने चाहिए और उनके हानिकारक प्रभाव लोगों को पता चलने चाहिए। यदि इस पर और विस्तृत लेख प्रकाशित किया जाए तो आमजन का बहुत भला होगा।

आर्य समाज रावतभाटा
वाया कोटा, राजस्थान 132330

प्रकृति संरक्षण के प्रति महर्षि दयानन्द का वैदिक दृष्टिकोण

● पण्डित वेदप्रकाश शास्त्री

महर्षि दयानन्द प्रकृति संरक्षण के प्रति अत्यन्त संवेदनशील थे। जल हो या भूमि, वन हों या उपवन अथवा अन्य पेड़–पौधे, वनस्पतियाँ हों या औषधियाँ, वायु हो या आकाश–इन सभी की वे शुद्धि चाहते थे।

जल और वायु की शुद्धि पर वे विशेष बल देते थे क्योंकि यही दोनों स्वास्थ्य रक्षा के मूलाधार हैं। महर्षि के वेदभाष्य में उनके संरक्षण हेतु अनेकत्र निर्देश प्राप्त होते हैं। अवलोकनार्थ कुछ उदाहरण प्रस्तुत करना अप्रासंगिक न होगा–

1. मनुष्यों को चाहिए कि नदियों को मार्गों, बम्बों, कूपों, जलप्रायदेशों, बड़े और छोटे तालाबों के जल को चला जहाँ कहीं बाँध और खेत आदि में छोड़ कर पुष्कल अन्न, फल, वृक्ष, लता, गुल्म आदि को अच्छी प्रकार बढ़ावें।

यजु. 16/37

महर्षि ने इन पंक्तियों में "गागर में सागर" भर दिया है। नदियों पर बाँध बनाकर खेतों को जल पहुँचाने की अवधारणा में महर्षि की कितनी बड़ी दूरदर्शिता दृष्टिगोचर होती है। इतना ही नहीं नलकूपों, कूपों (कुओं), तालाबों आदि में भी सुविधानुसार खेतों तक जल पहुँचाने का संकेत है। जिससे कृषक अत्यधिक अन्न उत्पन्न कर सकें। साथ ही फल, वृक्ष, लताएँ आदि भिन्न–भिन्न प्रकार के वृक्षारोपण हेतु भी प्रेरित किया है जिससे वायु शुद्ध प्राप्त हो। लोग स्वस्थ रहें।

2. जो पुरुष जिन औषधियों को खोदे, वह उनकी जड़ न मेटे। जितना प्रयोजन हो उतनी लेकर नित्य रोगों को हटाता रहे। औषधियों की परम्परा को बढ़ाता रहे जिससे सब प्राणी रोगों के दुःख से बच सुखी होवें।

यजु. 12/95

महर्षि दयानन्द सभी मनुष्यों को स्वस्थ देखना चाहते थे। अतः जड़ी–बूटी तोड़ने–काटने वाले व्यक्तियों को सावधान कर दिया कि उन्हें जड़ से न काट देना जिससे वह समूल ही नष्ट हो जाएँ। "न रहे बाँस, न बजे बाँसुरी" की उक्ति को चरितार्थ नहीं करना। साथ ही इनमें वृद्धि भी करना है जिससे औषधि की प्राप्ति की परम्परा समाप्त न हो जाए।

3. मनुष्यों को चाहिए कि प्रमाद को छोड़ कर आकाश में वर्तमान वायु के वेग और वर्षा के प्रबन्धरूप मेघ का विनाश न करके अपनी–अपनी अवस्था को बढ़ावें।

यजु. 13.42

महर्षि का कहना है– किसी मनुष्य को आलसी नहीं होना चाहिए। दूसरी बात, वर्षाकारक जो मेघ हैं उन्हें छिन्न–भिन्न न करें अर्थात् प्रदूषणयुक्त धुआँ, गैस, रासायनिक तत्त्व अथवा एतादृश अम्ल आदि कलकारखानों, संयंत्रों से उत्पन्न कर आकाश में न पहुँचाएँ क्योंकि ये प्रदूषित तत्त्व आकाश में बादलों से मिलकर अम्लीय वर्षा करते हैं, वर्षा का जल प्रदूषित हो जाता है जो धरती पर आकर लाभ की अपेक्षा हानिकारक सिद्ध होता है।

आकाश से शुद्ध जल प्राप्त होने पर ही उसके सेवन से आयु में वृद्धि हो सकती है। लोग स्वस्थ रह सकते हैं।

4. महर्षि केवल मनुष्यों के स्वास्थ्य की ही चिन्ता नहीं करते अपितु, गौ आदि पशुओं की भी वृद्धि चाहते हैं–

जो मनुष्य मेघ से उत्पन्न वर्षा और वर्षा से उत्पन्न हुए तृण आदि की रक्षा से गौ आदि पशुओं को बढ़ावें, वे पुष्कल भोग को प्राप्त होंवे।

यजु. 16/44

महर्षि के अनुसार जब आकाश मण्डल प्रदूषण रहित होगा तभी वर्षा का जल शुद्ध और स्वच्छ होगा। जल स्वस्थ होने पर धरती पर उगने वाले पेड़–पौधे, घास, फसल भी शुद्ध और अधिक उत्पन्न होंगी। इससे गौ आदि पशुओं में वृद्धि होगी जिससे मनुष्यों को दुग्धादि भी शुद्ध मिलेगा और मनुष्य भी स्वस्थ, बलवान् और बुद्धिमान् होंगे।

इससे महर्षि की दूरदर्शिता स्पष्टतः परिलक्षित होती है।

5. महर्षि दयानन्द ने मनुष्यों की वेदादि शास्त्रों से शोभा हेतु उपमान, वृक्ष, पशु एवं पक्षियों से चुने हैं–

जैसे सुन्दर शाखा, पत्र, पुष्प, फल और मूलों से युक्त वृक्ष शोभित होते हैं वैसे ही वेदादि शास्त्रों के पढ़ने और पढ़ानेहारे सुशोभित होते हैं। जैसे पशु पूँछ आदि अवयवों से अपने काम करते और जैसे पक्षी पंखों से आकाश मार्ग से जाते और आनन्दित होते हैं वैसे मनुष्य विद्या और अच्छी शिक्षा को प्राप्त हो पुरुषार्थ के साथ सुखों को प्राप्त हों।

6. महर्षि ने वर्षा के कारण वृक्षों और वनों का आधिक्य माना है।

वन के वृक्षों की रक्षा के बिना बहुत वर्षा और रोगों की न्यूनता नहीं होती।

यजु. 12/33

7. जब बसन्त ऋतु आता है तब पुष्प आदि के सुगन्धों से युक्त वायु आदि पदार्थ होते हैं। उस ऋतु में घूमना, डोलना पथ्य होता है। ऐसा निश्चित जानना चाहिए।

यजु. 13/27

बाग–बगीचे, पार्क आदि स्थानों में भ्रमण कर स्वास्थ्य–लाभ करना अधिक हितकर है। प्रकृति के समीप रहकर ही यह प्राप्त किया जा सकता है।

8. जब बसन्त ऋतु आता है तब पक्षी भी कोमल मधुर–मधुर शब्द बोलते और अन्य सभी प्राणी आनन्दित होते हैं।

यजु. 13/28

मनुष्य को भी ऐसी सुन्दर ऋतु के मध्य कुछ समय निकाल कर भ्रमण करते हुए प्रफुल्ल वदन होकर प्रातःसायं खिले हुए पुष्पों को देखकर आनन्दित होना चाहिए। किसी विद्वान् का कथन है–

आनन्द स्रोत बह रहा, फिर तू क्यों उदास है?

9. ऐसे मधुमास अर्थात् बसन्त ऋतु में वातावरण यद्यपि आनन्ददायक होता है तथापि महर्षि उसे और भी आनन्दकर, स्वास्थ्यवर्धक, रोगनिवारक बना देना चाहते हैं–

हे मनुष्यो! तुम लोग बसन्त ऋतु को प्राप्त होकर जिस प्रकार के पदार्थों के होम से वनस्पति आदि कोमल गुणयुक्त हों, ऐसे यज्ञ का अनुष्ठान करो और इस प्रकार बसन्त ऋतु के सुख को सब जने तुम लोग प्राप्त होओ।

यजु. 13/29

10. मनुष्य बसन्त और ग्रीष्म ऋतु के जलाशयस्थ शीतल जल का सेवन करें जिससे गर्मी से दुःखी न हों और जिस यज्ञ से वर्षा भी ठीक–ठाक हो और प्रजा आनन्दित हो, उसका सेवन करो।

यजु. 13/30

11. वस्तुतः यज्ञ वर्षा में केवल सहायक ही नहीं अपितु शुद्ध जल का कारक भी है और रोगनाशक भी। इसी के दृष्टिगत महर्षि दयानन्द ने यज्ञ द्वारा शुद्ध जल की वर्षा हेतु प्रेरित किया है। वरना प्रदूषण युक्त वर्षा तो होती ही रहती है। यज्ञ विस्तार हेतु उनके विचारों पर दृष्टिपात करना अनुचित न होगा–

12. ऋत्विज् लोग घृत को शोध कर्त्ता से अग्नि में होम कर और वायु तथा वर्षाजल को रोगनाशक करके सबको सुखी करते हैं।

यजु. 15/43

13. अग्नि सुगन्धादि के होम से इष्ट सुख देता और यज्ञकर्ता जन यज्ञ की सामग्री पूरी करता है।

यजु. 15/54

14. यह अग्नि अपने सूर्यादि रूप से सब पदार्थों से रस को ऊपर ले जा कर वर्षा के उत्तम सुखों को प्रकट करता है।

यजु. 17/9

15. अग्निहोत्र आदि यज्ञ में चार प्रकार के पदार्थ होते हैं अर्थात् बहुत सा पुष्टि, सुगन्धित, मिष्ट और रोग नाश करने वाला होम का पदार्थ, उसका शोधन, यज्ञ का करने वाला तथा वेदी, आग, लकड़ी आदि। यथाविधि से हवन किया हुआ पदार्थ आकाश में जाकर फिर वहां से जल के द्वारा आकर इच्छा की सिद्धि करने वाला होता है। ऐसा मनुष्यों को जानना चाहिए।

यजु. 17/57

16. मनुष्यों को योग्य है कि चावल आदि से अच्छे संस्कार किए हुए भात आदि को बना अग्नि में होम करें तथा आप खावें, औरों को खिलावें।

यजु. 18/12

यज्ञ करने के लिए जो पदार्थ प्राप्त होते हैं वे कृषि द्वारा अन्न रूप से, गौ आदि पशुओं से घी, दूध अभिरूप में, वनों और वृक्षों में समिधाएँ तथा औषधियाँ, जड़ी–बूटियाँ हवन सामग्री हेतु प्राप्त होती हैं। अतः महर्षि इन सभी की वृद्धि, उन्नति, स्वच्छता, शुद्धता और रक्षा चाहते हैं अतः वे कहते हैं–

17. वनों को नहीं काटना।

यजु. 16/20

18. वन आदि के रक्षक मनुष्यों को अन्न आदि पदार्थ दे कर वृक्षों और ओषधि पदार्थों की उन्नति करें।

यजु. 16/19

जल का मानव जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। अतः महर्षि सभी प्राणियों के लिए शुद्ध जल की कामना करते हैं। चाहे वह आकाश में हो, धरती पर अथवा धरती के अन्दर हो। सारा जल शुद्ध और हितकारी होना चाहिए–

19. जो जल पृथिवी के अन्दर अथवा ऊपर विद्यमान है, जो जल ओषधियों में है, जो जल द्यौलोक में है, जो जल अन्तरिक्ष अर्थात् सूर्य और पृथिवी के मध्य में स्थित है, जो दिशाएं और विदिशाएं हैं, वे हमारे लिए अत्यधिक सुन्दर, उत्तम, शुद्ध और हितकारी जलवाली होवें।

यजु. 19/36

20. पे जल, ओषधियाँ हमारे लिए सुन्दर मित्रों के सदृश हितकारिणी होवें।

यजु. 35/12

21. हमारी प्रजाओं का कल्याण हो। साथ ही हमारे पशु निर्भय हों।

यजु. 36/22

22. मनोवांछित सुख सिद्धि, पवित्रता, रक्षा एवं पीने के लिए दिव्यगुणयुक्त यह जल हमारे लिए सुखकारी हो। चारों ओर से हम पर सुखों की वर्षा करे। यजु. 36/2

23. पर्वत हमारे लिए स्थिर और सुखशान्तिदायक हों। नदियाँ और समुद्र कल्याणकारक हों। जल भी शान्ति के लिए हों।

ऋ. 7/35/8

24. वायु हमारे लिए सुखकारी होकर बहे। सूर्य हमारे लिए कल्याणकारी होकर तपे। अत्यन्त शब्द करता हुआ दिव्य-गुणयुक्त विद्युत् से युक्त मेघ हमारे लिए सम्यक् वर्षा करें।

यजु. 36/10

25. पर्वत, नदियाँ, वन सदृश स्थान शान्तिदायक एवं एकान्त स्थान होते हैं। इसीलिए ऋषि-मुनि, ज्ञानी, सन्त, महात्मा वनों में निवास करते थे। नदी तट पर निवास एवं विचरण करते थे। तप, त्याग का जीवन व्यतीत करते हुए वेद आदि शास्त्रों का आगन्तुक महानुभावों को संदेश देते थे। ऐसा इसलिए था क्योंकि पर्वत और नदी-तटों पर ही बुद्धि का विकास होता है-

पर्वतों के निकट अथवा गुफा में और नदियों के संगम स्थल में योगाभ्यास से विचारशील व्यक्ति उत्तम बुद्धि एवं कर्म से युक्त होता है।

यजु. 26/15

प्रयाग में गंगा-यमुना का संगम होता है। प्राचीन काल में यहाँ पर बड़े-बड़े यज्ञ हुआ करते थे। इसीलिए इसका नाम "प्रयाग" पड़ गया है। हरिद्वार पर्वतीय तलहटी में गंगातट पर बसा हुआ है। अत्यन्त सुरम्य स्थल है। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि यहाँ गुफाओं में तप किया करते थे। इसलिए इसे हरिद्वार=ईश्वर की प्राप्ति का द्वार कहते हैं। ऐसे शुद्ध, पवित्र, सुन्दर, आध्यात्मिक स्थान भला और कहाँ मिलेंगे? महर्षि दयानन्द ने भी हिमालय की गुफाओं में साधना की थी। हरिद्वार तो उनकी कर्म स्थली भी थी। पाखण्ड खण्डिनी पताका यहाँ पर लहराई थी। पौराणिक पण्डितों ने शास्त्रार्थ किया था। उनकी गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति पर आधारित स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा स्थापित गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार आज भी महर्षि की कीर्ति पताका को थामे हुए है।

महर्षि दयानन्द कहते हैं-

26. अध्यापक और अध्येता को चाहिए कि प्रकृति से लेकर पृथिवी पर्यन्त पदार्थों की रक्षा आदि के लिए जानें अर्थात् उन्हें इनके उपयोग के विभिन्न प्रकारों को जानना चाहिए।

यजु. 33/49

27. महर्षि सर्वत्र सुख और शान्ति चाहते हैं। प्रकृति के अन्तर्गत जितनी भी वस्तुएँ आती हैं, वे उन सभी से शान्ति की कामना करते हैं-

द्यौः शान्तिः, अन्तरिक्षं शान्तिः, पृथिवी शान्तिः, आप शान्तिः, औषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिः, विश्वे देवाः शान्तिः, ब्रह्म शान्तिः, सर्वं शान्तिः, शान्तिः एवं शान्तिः, सा मा शान्तिः, एधि।।

यजु. 26/17

हे ईश्वर! द्युलोक शान्तिदायक हो, अन्तरिक्ष लोक शान्तिप्रद हो, पृथिवी शान्तियुक्त हो, जल शान्तिकारक हो, ओषधियाँ शान्तिकारिणी हों। वनस्पतियाँ शान्तिदायक हों, सम्पूर्ण दिव्य शक्तियाँ और पदार्थ सुखदायक हों अथवा सभी विद्वान् उपद्रवनिवारक और शान्तिप्रदायक हों, वेदज्ञान सर्वजनहिताय शान्तिदायक हो। सभी पदार्थ-वस्तुएँ सुखदायी हों। शान्ति की भावना भी स्वयं शान्तियुक्त हो। वही शान्ति जो उपर्युक्त वस्तुओं में विद्यमान है- मुझे भी वृद्धि की ओर ले जाए।

यदि सभी मनुष्यों को ऊपर वर्णित वस्तुओं से शान्ति की प्राप्ति हो जाए भला उसे और क्या चाहिए? परन्तु इसके लिए प्रयत्नशील होना पड़ेगा। उद्यम करना होगा तभी इच्छित वस्तु की प्राप्ति हो सकती है। केवल इच्छा से नहीं।

उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।।

28. वृक्षों की सभी जड़ों, शाखाओं, वनस्पतियों, फूलों, फलों, ओषधियों के लिए उत्तम क्रिया अवश्य करनी चाहिए। मनुष्य नित्य सुगन्ध्यादि पदार्थों को अग्नि में छोड़ अर्थात् हवन कर पवन और सूर्य की किरणों द्वारा वनस्पति, औषधि, मूल, शाखा, पुष्प और फलादिकों में प्रवेश कराके सब पदार्थों की शुद्धि कर आरोग्यता की सिद्धि करें।

यजु. 22/28,29

29. हे यज्ञशील विद्वन्! ये वस्तुएं आपके यज्ञ का विस्तार करें। ये महीने आपके यज्ञीय पदार्थों की रक्षा करें। यह संवत्सर अर्थात् वर्ष यज्ञ को धारण एवं पुष्ट करे और हमारी प्रजा की सब ओर से न्यायपूर्वक रक्षा करो।

यजु. 26/14

30. **निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न औषधयः पच्यन्ताम्।।**

यजु. 22/22

हमारी प्रत्येक कामना के अनुसार मेघ वर्षा करें। हमारी सभी प्रकार की ओषधियाँ उत्तम फलवाली होकर परिपक्व हों।

31. हे मनुष्यों! प्रशस्त फूलों वाला, प्रशस्त फलों वाली ओषधियों से आनन्दित होवे। जिस प्रकार संग्राम में घोड़े विजय करने वाले होते हैं वैसे ही ये ओषधियाँ विविध रोगों को रोकने वाली हैं। साथ ही ये रोग रूप विघ्नों से पार ले जानी वाली हैं।

यजु. 12/77

32. हे ओषधियों! आपका खोदने वाला हिंसित मत हो अर्थात् खुदाई के समय किसी प्रकार की चोट न आए अथवा खोदने वाला आपको हिंसित न करे अर्थात् तुम्हें जड़ से ही न उखाड़ दे अथवा काट दे। जिसके लिए तुम्हें खो देता हूँ, वह हमारे दोपाए मनुष्यादि और चौपाए आदि पशु सभी निरोग हों।

यजु. 12/95

33. ओषधियों के रूपों की भिन्नता का वर्णन करते हुए कहते हैं- जो ओषधियाँ फल वाली हैं अर्थात् जिन पर फल आते हैं, जो फल रहित हैं अर्थात् जिन पर फल नहीं आते हैं। जो फूलों से रहित हैं अर्थात् जिन पर फूल नहीं लगते। केवल फल लगते हैं। यथा-उदुम्बर (गूलर) फल-फूल से रहित गिलोय और जो फूलों वाली हैं अर्थात् कुछ में फूल आने के पश्चात् फल लगते हैं। यथा आम, केला आदि। किसी में फूल ही होते हैं, फल नहीं होते। यथा- बोगनबेलिया तथा एतादृश अन्य बेलें।

यजु. 12/89

प्रस्तुत उद्धरणों से ज्ञात होता है कि महर्षि दयानन्द, जल, वायु, आकाश, अन्तरिक्ष, पृथिवी, वन-उपवन, वृक्ष, ओषधियाँ, नदी, नालो, झीलों, सागर, पशु-पक्षी, वन्य जीव-जन्तु, चाहे जलचर हों अथवा थलचर, नभचर हों या उभयचर-जड़-चेतन सभी के प्रति संवेदन-शील हैं, सभी का कल्याण चाहते हैं। वातावरण शुद्ध हो। सभी प्राणी सुखपूर्वक साँस लें। खाद्य पेय सभी वस्तुएँ शुद्ध हों। यही महर्षि की कामना है।

शास्त्री भवन, 4-E, कैलाश नगर, फाजिल्का, पंजाब-152123

आर्य समाज और राष्ट्रभाषा

● अशोक आर्य

महर्षि के निधन के पश्चात् उनका स्थानापन्न आर्य समाज अपने संस्थापक के बहुविध कार्यों को पूरा करने में तत्पर हो गया। इसी योजना के अनुसार उसने हिन्दी प्रचार को भी अपना लक्ष्य बनाया। अपने सुदीर्घ जीवन काल में राष्ट्रभाषा पद पर हिन्दी को प्रतिष्ठित करने के लिए आर्यसमाज ने अनथक प्रयत्न किए। इन प्रयासों का संक्षिप्त विवेचन भी पूर्णतया दुष्कर है क्योंकि हिन्दी भाषा के प्रचार एवं प्रसार तथा हिन्दी साहित्य लेखन का कोई ऐसा क्षेत्र अवशिष्ट नहीं है। जिसमें आर्य समाज ने अपने कृतित्व का परिचय न दिया हो। पंजाब जैसे प्रान्त में जहाँ हिन्दी जानने और पढ़ने वाले लोगों की संख्या अत्यन्त नगण्य थी, आर्य समाज ने हिन्दी प्रचार का उल्लेखनीय कार्य किया। परिणाम यह निकला कि पंजाब में हिन्दी की लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई और वहाँ शिक्षा, पत्रकारिता तथा धर्म प्रचार के लिए हिन्दी को मुक्त कण्ठ से स्वीकार कर लिया गया। इसी प्रकार आर्य समाज ने दक्षिण प्रान्तों में वैदिक धर्म के प्रचारार्थ जो उपदेशक, भेजे उन्होंने भी अहिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी के माध्यम से धर्म का प्रचार किया। यह कार्यक्रम भारत तक ही सीमित नहीं रहा। अफ्रीका, गायना, मारीशस, फिज़ी, आदि देशों में जहाँ-जहाँ आर्य समाज प्रभावी भारतवासियों के माध्यम से पहुँचा वहाँ-वहाँ वह हिन्दी की विजय वैजयन्ती फहराता गया। परिणाम यह निकला कि आज विश्व भाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकृति मिलने की जो सम्भावना उत्पन्न हो गई है उनका बहुत कुछ श्रेय आर्य समाज को ही है। नागपुर में आयोजित प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन में उपस्थित विदेशी प्रतिनिधियों ने इस तथ्य को मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है। जहाँ तक काव्य, नाटक, कथा, उपन्यास, तथा पत्रकारिता आदि की विभिन्न साहित्य विधाओं में कृतकार्यता प्राप्त कर राष्ट्रभाषा के साहित्य भण्डार को समृद्ध करने का प्रश्न है, आर्य समाजी साहित्यकार इस क्षेत्र में भी अपने दायित्व को पूरा कर चुके हैं। पं. नाथूराम शर्मा 'शंकर', पं. हरिशंकर शर्मा, पं. अनूप शर्मा आदि कवियों, पं. सुदर्शन, पं. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार आदि कथाकारों, पं. रूद्रदत्त शर्मा, सम्पादकाचार्य पं. पद्यम सिंह शर्मा आदि पत्रकारों एवं समालोचकों ने आर्य समाज से ही प्रेरणा पाकर हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि की है। स्वामी दयानन्द के मन्तव्यों से सहमत होना तो सम्भवतः सभी के लिए आज भी संभव न हो, पर न्याय-दृष्टि रखने वाले इतना तो अवश्य स्वीकार करेंगे कि हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में स्वामी जी की देन अनुपम तथा अविस्मरणीय है। हिन्दी सेवा के लिए उनका-सा संकल्प, उनका-सा पांडित्य, उनकी-सी अनथक तपस्या, उनका-सा स्वार्थत्याग, उनकी-सी सत्यप्रियता, उनकी-सी सात्विक ललक का अन्य निदर्शन मिलता यदि संभव नहीं, तो कठिन अवश्य है।

दयानन्द युगः

स्वामी दयानन्द ने अपनी विचारधारा, विद्वत्ता तथा वक्तृत्व शैली से उस युग के प्रत्येक साहित्यकार को प्रभावित किया- परिणाम में उनका साहित्य प्रायः उस युग के किसी लेखक विचारक से कम नहीं है। रचनाओं के परिणाम एवं प्राचुर्य-वय योग्यता, सत्यनिष्ठा, ख्याति, विचारधारा के आधार पर उस युग को दयानन्द कहना ही उचित कहा जा सकता है।

हिन्दी के पोषक सुरक्त से पूरित सकल शिराएँ
हिन्दी के जयघोषों से अविरल करो दिशाएँ

हिन्दी के प्रचार प्रसार में आर्य समाज का योगदान से साभार

पत्र/कविता

भोग रहा है नर्क अब, पापी आसाराम

ढोंगी बाबा कर रहे– निश दिन गंदे काम।
आर्यवर्त्त को कर रहे, दुनियां में बदनाम।।
दुनियां में बदनाम; किया है भारत प्यारा।
हमें देख हँस रहा, देख लो, अब जग सारा।।
जनता है नादान, चाल में आ जाती है।
इसीलिए तो नहीं, बुराई रुक पाती है।।

सृष्टि का यह नियम है, सुनों लगाकर ध्यान।
कर्मों का फल जीव को, देता है भगवान।
देता है भगवान्, प्रभु की अद्‌भुत माया।।
न्यायकारी जगदीश, किसी ने पार न पाया।
बड़े–बड़े बलवान, वीर धनवान निराले।
जगदीश्वर ने मिटा दिये, पल में मतवाले।।

भोग रहा है नर्क अब, पापी आसाराम।
करता था जो रात–दिन, ढोंगी गन्दे काम।।
ढोंगी गन्दे काम, बड़ा बनता था त्यागी।
खुद को जो शैतान, बताता था वैरागी।।
अबलाओं की लाज लूटता था, नित पापी।
साधु वेश में, घूम रहा था खल सन्तापी।।

दुनियां के नर–नारियो!, अब तो जाओ जाग।
भला इसी में छोड़ दो, गुरुडम का तुम राग।।
गुरुडम का तुम राग, छोड़ दो सुख पाओगे।
वैदिक धर्मी बनो, नहीं धोखा खाओगे।।
पाखण्डियों की पोल खोल दो, आगे आओ।
स्पष्टवादी बनो, जगत् में आदर पाओ।।

जगत् गुरु दयानन्द के, मानो तुम उपकार।
जीवन को कर लो सफल, करो वेद प्रचार।।
करो वेद प्रचार, रात दिन करो भलाई।
बनो प्रभु के भक्त, मार्ग है यह सुखदायी।।
'नन्दलाल' अब दुखी–जनों को गले लगाओ।
करो धर्म के काम, अमर जग में हो जाओ।।

पं. नन्दलाल निर्भय, आर्य सदन बहीन, पलवल (हरियाणा) चलभाष : 9813845774

इस्लामी संगठन में भारत क्यों ?

इस्लामिक सहयोग संगठन (ओआईसी) के साथ भारत और चीन जैसे देशों को भी जोड़ा जाए, यह सिफारिश बांग्लादेश के विदेश मंत्री ने अभी–अभी की है। आजकल ढाका में इस्लामी देशों के विदेश मंत्रियों का सम्मेलन हो रहा है। अभी तक इस संगठन में उन्हीं देशों को सदस्यता दी गई है, जिनमें मुसलमानों की बहुसंख्या है लेकिन भारत और चीन जैसे कुछ देश ऐसे हैं, जिनमें मुसलमान अल्पसंख्यक हैं लेकिन उनकी संख्या कई मुस्लिम देशों से दुगुनी तिगुनी है। भारत के मुसलमान की संख्या लगभग 18 करोड़ है जबकि इंडोनेशिया की 22 करोड़ और पाकिस्तान की लगभग 20 करोड़ है। बांग्लादेशी मंत्री का कहना है कि भारत–जैसे देश को कम से कम पर्यवेक्षक की सीट तो मिलनी ही चाहिए। दुनिया के सारे मुसलमानों के 10 प्रतिशत मुसलमान अकेले भारत में रहते हैं। बांग्लादेश मंत्री के तर्क में कुछ दम जरुर मालूम पड़ता है लेकिन मैं समझता हूं कि इस तरह के महजब पर आधारित संगठन का सदस्य या पर्यवेक्षक बनना भारत के लिए ठीक नहीं है, फिर वह मजहब चाहे जो हो। एक तो भारत की धर्म निरपेक्ष छवि इससे विपरीत होगी। दूसरा, इस्लामी संगठन की बैठकें भारत–पाक दंगल का अखाड़ा बन जाएंगी। तीसरा, इस संगठन से दुनिया के मुसलमानों का कौनसा भला हो रहा है ? यदि यह संगठन जरा–भी प्रभावशाली होता तो सीरिया में मुस्लिम रक्त की नदियां क्यों बहती रहती ? ईरान और सउदी अरब में तू–तू–– मैं–मैं क्यों चलती रहती ? चौथा, तेल की आसान आमदनी के बावजूद दुनिया के मुसलमान इतने अभाव, इतनी अशिक्षा, इतनी असुरक्षा और इतने अविकास से ग्रस्त क्यों रहते? यह ठीक है कि इस संगठन का इस्तेमाल पाकिस्तान भारत–विरोध के लिए करता रहता है लेकिन यह विरोध तो भारत की सदस्यता के बावजूद भी जारी रहेगा।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक
dr.vaidik@gmail.com

****

जिस धर्म का राज्य नहीं, वह धर्म प्रभावहीन है

आज वीर सावरकार के विचारों को प्रसारित करने की अतीव आवश्यकता है। इसके लिए आवश्यक है कि देश का नाम हर भाषा में हिन्दुस्थान हो। राष्ट्रगान–राष्ट्रगीत न बोलने वालों–विरोध करने वालों पर जुर्माना तथा सजा हो, जेलों में बन्द कैदियों को प्रत्याशी नहीं बनने दिया जाए। प्रत्याशी बनने के लिए विधायकों के लिए बी.ए. तथा सांसदों के लिए एम.ए. होना अनिवार्य हो।

गऊ दूध को राष्ट्रीय पेय घोषित किया जाए और गऊ को राष्ट्रीय पशु देसी गायों और बिजारों की नस्ल में सुधार हो ताकि इन्हें पालने की प्रवृति बढ़े।

शराब पीने से और तम्बाकू सेवन से होने वाली हानियों का व्यापक प्रचार हो। अल्प संख्यक शब्द का प्रयोग बन्द हो क्योंकि धर्म निरपेक्ष शासन व्यवस्था में कोई भी समुदाय अल्प संख्यक कैसे हो सकता है? अल्प संख्यकों के लिए, सभी संस्थाओं–निगमों–मंत्रालयों–कार्यक्रमो को समाप्त किया जाए। और बेरोज़गारों को काम अथवा नौकरी दी जाए।

देश–विदेशों में हिन्दू हितों का पूरा ध्यान रखा जाए। अनिवार्य परिवार नियोजन के लिए चीन जैसा कड़ा कानून बनाया जाए। क्योंकि देश की भूमि ढ़ाई प्रतिशत है जबकि जनसंख्या साढ़े सोलह प्रतिशत है।

बलात्कार–गैंगरेप–अपहरण–छोटी लड़कियों का यौन उत्पीड़न करने वालों के लिए शीघ्र तथा कड़े दण्ड का प्रावधान हो। 90 अल्पसंख्यक बहुल जिलों को पुनः सामान्य जिले घोषित किया जाए।

मुगल काल में जबर्दस्ती तोड़े गए मन्दिरों का जीर्णोद्धार हो। अनुच्छंद 370, 371 तथा 35ए को हटाया जाए। पाकिस्तान को दिए गए मोस्ट फेवर्ड नेशन के दर्जे का समाप्त करना।

सिन्धु जल समझौते में पाकिस्तान को 81 प्रतिशत जल दिया जा रहा है जो बन्द किया जाए।

इन्द्रदेव गुलाटी, 18/186, टीचर्स कॉलोनी
बुलन्दशहर (उ.प्र.) 203001
मो. 08958778443

****

झालावाड़ में निजी क्षेत्र का पहला ब्लड बैंक 'रुधिरा' का शुभारंभ

झालावाड़ शहर में रुधिरा ब्लड बैंक के निदेशक डॉ. वेदप्रकाश गुप्ता ने बताया कि ब्लड बैंक में करीब 15 सौ यूनिट ब्लड रखने की क्षमता होगी। ब्लड बैंक का उद्घाटन मुख्य अतिथि जन अभाव अभियोग निराकरण समिति अध्यक्ष श्रीकृष्ण पाटीदार ने फीता काटकर किया।

इस मौके पर मुख्य अतिथि पाटीदार ने कहा कि जिले में सरकारी ब्लड बैंक तो है लेकिन यह निजी क्षेत्र की पहली ब्लड बैंक है। इसमें अब लोगों को प्लेट्सलेट चढ़ाने की सुविधा मिल पाएगी। इससे जिले के लोगों को और लाभ मिलेगा। कार्यक्रम में विशिष्ट अतिथि भवानी मंडी के श्री जे.के. अरोड़ा थे। ब्लड बैंक उद्घाटन की शुरूआत कोटा से डॉ. भुवनेश गुप्ता व हनीफ चौधरी द्वारा रक्तदान से की गई। इस मौके पर डॉ. सुषमा पांडे, डॉ. एम.एल. कुलश्रेष्ठ, सुरेश गुप्ता सहित कई डॉक्टर व अन्य लोग मौजूद थे। आभार निदेशक डॉ. वेदप्रकाश गुप्ता ने व्यक्त किया।

निराश्रित बालगृह में आर्य समाज का वैदिक सत्संग संपन्न

आर्य समाज जिला सभा कोटा के तत्त्वावधान में रंगबाड़ी स्थित निराश्रित बालगृह में वैदिक सत्संग का आयोजन किया गया। सत्संग में बच्चों को संबोधित करते हुए मुख्य वक्ता श्री प्रकाश आर्य ने कहा कि बच्चों में सद्गुणों का विकास करना महान कार्य है, क्योंकि श्रेष्ठ संस्कारों से मानव बनता है। संस्कारित व्यक्तित्व का निर्माण ही संस्थान का संकल्प होना चाहिए।

इस अवसर पर आर्य समाज जिला सभा के प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने अपने संदेश में कहा कि आत्मिक उन्नति के लिए आर्य समाज से जुड़े एवं महर्षि दयानन्द की वैदिक विचारधारा के अनुकूल सिद्धांतों को जीवन में धारण करें, इससे सत्य ज्ञान की प्राप्ति होती है।

कार्यक्रम का शुभारंभ ईशवंदना एवं ईश्वर स्तुति प्रार्थना मंत्रों के साथ हुआ। संचालिका श्रीमती बृजबाला निर्भीक ने उपस्थित जनों का स्वागत किया एवं

संस्थान की गतिविधियों से अवगत कराया।

डी.ए.वी. के धर्म शिक्षक पं. शोभाराम आर्य तथा श्रीमती सुनीता शर्मा ने भी संबोधित किया।

आर्य समाज महावीर नगर के प्रधान रामचरण आर्य ने भजन प्रस्तुत किया। मधुस्मृति संस्थान के बच्चों ने गायत्री मंत्र की संगीतमय प्रस्तुति दी।

जम्मू-कश्मीर में वेद प्रचार की धूम

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी वेद प्रचार मण्डल–राजौरी–पूंछ के तत्त्वावधान में, वेद प्रचार, आर्य समाजों एवं गांव–गांव में हुआ। आर्य समाज लम्बेड़ी का 37वां वार्षिकोत्सव धर्मसम्मेलन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

गांव ऐनपुर (कांगड़ी) सुन्दरवनी में श्रीमती सुरेष्ठा एवं श्री नरेश के घर टाक *वन्याड (सुन्दरवनी) में श्री* महावीर आर्य के घर यज्ञ–हवन, उपरान्त भजन–प्रवचन हुए।

आर्य समाज वरेरी में श्री राम प्रकाश के घर सत्संग और प्रातः यज्ञ–हवन भजन प्रवचन आदि हुये। आर्य समाज भजन्वा (नौराहरा) में वेद प्रचार हुआ। आर्य समाज राजौरी में वेद प्रचार के बाद गांव दलोगढ़ा में विशेष यज्ञ हवन यज्ञ एवं सत्संग रखा गया।

इसी दिन 3 बजे से 5 बजे तक बलिदान भवन राजौरी में महिला सत्संग हुआ। बलिदान भवन राजौरी में विशेष यज्ञ–हवन, उन शहीदों की याद में जिन्होंने देश, धर्म, और अपनी संस्कृति के लिए अपनी जान कुर्बान की थी। राजौरी विजय दिवस मनाया गया जिस दिन राजौरी कबालियों से मुक्त कराया गया था।

गांव जमैना– लम्बेड़ी मा. रोशन शास्त्री जी के घर रात्रि सत्संग प्रातः यज्ञ–हवन, भजन–प्रवचन हुये। इसीदिन 10/12 बच्चों ने संकल्प लिया कि हम जिन्दगी भर मांस, मंदिर चुटकी नेवाल इत्यादि नहीं खायेंगे। और साप्ताहिक सत्संग आर्यसमाज लम्बेड़ी में जाया करेंगे।

आर्य समाज नौशहरा में वेद प्रचार हुआ। सनातन धर्म सभा के प्रधान जगदीश ने कहा आज आर्य समाज ही पाखंडों से बचा सकेगा।

गांव सलेरी पं. लालचन्द जी के घर वेद प्रचार सफल रहा। आर्य समाज अखनूर (जम्मू) में वेद प्रचार और तक पारिवारिक यज्ञ–हवन सत्संग श्री भारत भूषण मल्होत्रा के घर सफल रहा।

आर्यसमाज पंचतूत (जम्मू–अखनूर) में वेद प्रचार हुआ एवं कार्यक्रम की पूर्णाहुति। प्रत्येक स्थानों पर बीच–बीच में सत्यार्थप्रकाश, महर्षि दयानन्द जी जीवनी एवं आर्य समाज क्या मानता है। बांटी गई कुछ पुस्तकें सभा की ओर से थी। वेद प्रचार गाड़ी (रथ) आर्यप्रतिनिधि सभा जम्मू कश्मीर की ओर से थी।

गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार में होगा अन्तर्राष्ट्रीय गुरुकुल महासम्मेलन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी से प्राप्त विज्ञप्ति के अनुसार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में अन्तर्राष्ट्रीय गुरुकुल महासम्मेलन 6 से 8 जुलाई 2018 की तिथियों में विशाल स्तर पर हरिद्वार के गुरुकुल कांगड़ी परिसर में आयोजित किया जा रहा है। यह सम्मेलन लगभग एक दर्जन गुरुकुलों के संचालक एवं आर्ष शिक्षा पद्धति को समर्पित श्रद्धेय स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी की अध्यक्षता में आयोजित होगा। इस सम्मेलन में देश–विदेश से हजारों की संख्या में आर्यजन एवं गुरुकलों के छात्र–छात्राऐं भाग लेने के लिए पहुँच रहे हैं। यह सम्मेलन आर्य समाज एवं गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के इतिहास में पहला सम्मेलन होगा जिसके माध्यम से आर्ष शिक्षा प्रणाली को और अधिक प्रभावी बनाने तथा सरकार से विशेष सहयोग प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया जाऐगा। विज्ञप्ति के अनुसार सभी प्रान्तीय इकाइयों को अपने प्रान्त के समस्त गुरुकुलों के प्रबन्धकों एवं आचार्यो को अपनी प्रान्तीय सभा की ओर से निर्देश देने की कहा गया है कि अधिक से अधिक छात्र–छात्राओं के साथ सम्मेलन में भाग लें।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 30/31-05-2018

डी.ए.वी. बठिण्डा में आर्य समाज का गठन

डी.ए.वी. कॉलेज बठिण्डा के लिए यह अति ही गौरवान्वित विषय है कि आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली व आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पंजाब के दिशा निर्देशों का अनुगमन करते हुए कॉलजे में ''आर्य समाज डी.ए.वी. कॉलजे, बठिण्डा'' समिति का निर्माण किया गया। ध्यातव्य है कि इस नेक कार्य की पीछे मुख्य मंतव्य स्वामी दयानंद जी की सकारात्मक सोच को व्यावहारिक जामा पहनाना है। महात्मा हंसराज जी से प्रेम शक्ति ग्रहण कर व स्वामी आनंद स्वामी जी के विचारों का अनुसरण करते हुए डी.ए.वी कॉलेज, बठिण्डा ने समाज भलाई कार्यों में एक कदम और

आगे बढ़ाया है। वेदों का प्रचार, सामाजिक जागरूकता का प्रसार, रूढ़ियों व आडम्बरों का खण्डन, मानसिक जड़ता को समूल नष्ट करना, चरित्र निर्माण, मानवीय मूल्यों की स्थापना, सर्वजन हिताय की भवाना का विस्तार व युवा वर्ग को चरित्रवान बनाना आदि जैसे लक्ष्यों की पूर्ति हेतु ही आर्य समाज का निर्माण किया गया।

सम्पूर्ण स्टाफ के साक्ष्य में प्राचार्य डॉ. सजीव शर्मा को आर्य समाज का अध्यक्ष, प्रो. मोनिका घुल्ला को आर्य समाज का मंत्री व प्रो. नेहा गर्ग को कोषाध्यक्षा नियुक्त किया। उन्होंने यह आशा व्यक्त की कि भावी समय में प्रो. मोनिका के कुशल नेतृत्व में आर्य समाज नव्य शिखरों, नूतन क्षितिजों का संस्पर्शन कर नवल कीर्तिमानों को स्थापित कर कॉलेज का नाम चमत्कृत करेगा। सम्पूर्ण स्टॉफ का आर्य समाज के निर्माण के लिए दिए गए आर्थिक सहयोग के लिए प्राचार्य जी ने उनका धन्यवाद ज्ञापन किया।

डी.ए.वी स्कूल समाना में निकली स्वच्छता जागरूकता रैली

डी.ए.वी. स्कूल समाना में स्कूल के बच्चों द्वारा स्वच्छता अभियान चलाने की जिम्मेदारी ली गई जिस में कक्षा नौवीं के बच्चों द्वारा समाना के प्रसिद्ध सती माता मंदिर के नजदीक पार्क में एक रैली निकाली गई। इस रैली में बच्चों ने बड़े उत्साह के साथ भाग लिया। बच्चों ने शहर निवासियों को स्वच्छता अभियान चलाने के उद्देश्य को स्पष्ट किया तथा जरूरत के स्थान पर झाडू और कूड़ेदान बाँटे। बच्चों ने स्वयं ही स्वच्छता का बीड़ा उठाया तथा आम जनता को भी इस के प्रति जागरूक किया।

बच्चों ने अपनी गतिविधि द्वारा यह भी बताया कि किस प्रकार हम फैलते प्रदूषण से अपने आप को सुरक्षित कर सकते हैं। इस गतिविधि के लिए प्रधानाचार्य डॉ. मोहनलाल शर्मा को बधाई और धन्यवाद दिया। सभी शहर निवासियों ने इन प्रयासों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की और समाज कल्याण हेतु बढ़ते कदमों की सराहना की।

सूरज भान डी.ए.वी. वसंत विहार में मनाये गए विभिन्न विश्व-दिवस

सूरज भान डी. ए. वी. पब्लिक स्कूल वसंत विहार के अन्तर्गत विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती अनीता आहूजा के मार्गदर्शन में 'विश्व स्वास्थ्य दिवस' का आयोजन किया गया। **"शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्"** इस सूक्ति के द्वारा विद्यालय की प्रधानाचार्या जी ने कार्यक्रम का शुभारम्भ करते हुए छात्रों को स्वास्थ्य के महत्त्व को समझाया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित दिल्ली के विख्यात मनोचिकित्सक डॉ. दीपक गुप्ता ने जीवन को स्वस्थ एवं उर्जावान् बनाने हेतु छात्रों को अनेक मूल मन्त्र प्रदान किए।

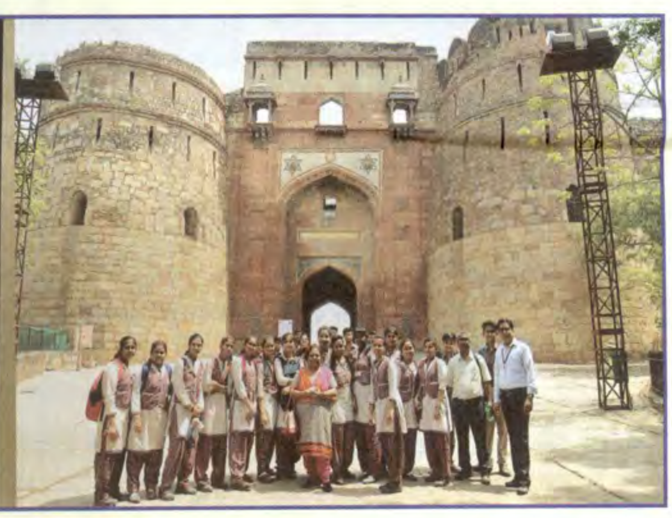

'विश्व धरोहर दिवस' के अवसर पर विद्यालय द्वारा छात्रों को भिन्न–भिन्न ऐतिहासिक स्थलों के महत्त्व से अवगत कराते हुए दिल्ली के मुख्य ऐतिहासिक स्थलों का दर्शन कराया गया तथा उनसे पोस्टर बनवाये गये।

'विश्व पृथ्वी दिवस' के आयोजन पर छात्रों द्वारा 'पृथ्वी संरक्षण' विषय पर पोस्टर बनाये गये तथा एक लघु नाटिका प्रस्तुत की गयी।

'विश्व नृत्य दिवस' का भी आयोजन किया गया जिसमें प्रातःकालीन प्रार्थनासभा के अन्तर्गत विद्यार्थियों को नृत्य के महत्त्व से अवगत कराया गया तथा विद्यार्थियों द्वारा अनेक मनमोहक नृत्य प्रस्तुत किए गए।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**